को त्याग सुख से बैठा रहे" मन की बात कौन जान सक्ता है ऊपर से दिखलाने को अलबत्ता बगुला भगत इन्द्रीजित बन गया है बस यावत् कर्तव्य अकर्तव्य से मुक्त हो गया--आगे ईश्वर को वैषम्य नैर्घृण्य दोष से मुक्त कराने को यह कहते हैं--

नादत्ते कस्याचित्पापं नचैव सुकृतं विभुः ।
अज्ञानेनावृतं ज्ञानं तेन मुह्यन्ति जन्तवः ॥

परमेश्वर जो सबों में व्यापक रूप से विद्यमान है किसी को न तो पाप कर्म करने का हेतु होता है न सुकृत का--अविद्या रूप अज्ञान से ज्ञान ढंपा हुआ है जिससे यह मनुष्य अकर्ता हो कर भी अपने को कर्ता भोक्ता माने हुये है इसी से दुःख उठाता है--हम अकर्ता हैं यह बुद्धि हम में कैसे आवे इस की उपाय आगे कहते हैं--

तद्बुद्धयस्तदात्मानस्तन्निष्ठास्तत्परायणाः ।
गच्छन्त्यपुनरावृत्तिं ज्ञाननिर्धूत कल्मषाः ॥

सब भांति अपने को ईश्वर में तन्मय कर लेनेही से यह हो सक्ता है--सच है जो परमेश्वर में सब भांत तन्मय हो गया अपना पन उसमें किसी बात का रहई नहीं तब पाप या पुण्य फिर कैसा--आगे सम बुद्धि क्या है और क्या उस का परिणाम है सो देखलाते हैं--

विद्याविनय संपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि ।
शुनि चैव श्वपाकेच पण्डिताः समदर्शिनः ॥

विद्वान् तथा अचारवान् ब्राह्मण गऊ हाथी कुत्ता और चाण्डाल सबों को पण्डित जन एकही मानते हैं इस तरह की समझ जिनमें आगई वे निःसन्देह जीवन मुक्त हैं--इस सम बुद्धि में सब गुणही गुण हैं दोष इसमें एक भी नहीं हैं--समता साक्षात् ब्रह्म का रूप है--सम बुद्धि होने से सुख दुख से मुक्त हो जाता है--

न प्रहृष्येत्प्रियंप्राप्यनोद्विजेत्प्राप्यचाप्रियम्।
स्थिरबुद्धिरसंमूढोब्रह्मविद्ब्रह्मणिस्थितः॥

अपने अनुकूल वस्तु पाकर प्रसन्न न हो न अपने प्रतिकूल पाय दुखी हो सदैव स्थिर बुद्धि हो मोह के जाल से मुक्त ब्रह्म का जानने वाला ब्रह्म में स्थित रहै--बाहर की बातों में जिसका चित्त नहीं लगा है उसे अपने को पहचानने में जो सुख मिलता है वह गूंगे को लड्डू के समान क्या कोई कह कर प्रगट कर सकता है—बाहरी जितने सुख दुख कोई सदा रहने वाले नहीं हैं ऐसा समझ बुद्धिमान् उनमें नहीं फसते--

ये हि संस्पर्शजा भोगा दुःखयोनय एव ते।
आद्यन्तवन्तः कौन्तेय नतेषु रमते बुधः॥

संसार से बिदा होने के पहले जो कामक्रोध सुख दुख के वेग को सह लेते हैं और ज़रा भी काम क्रोध सुख दुख का झोंका उन पर नहीं आता वेही पूरे योगी और वास्तव में सुखी हैं-

लभन्ते ब्रह्मनिर्बाणमृषयः क्षीणकल्मषाः।
छिन्नद्वैधा यतात्मानः सर्वभूतहिते रताः॥

जिन के पाप दूर हो गये हैं; जिनमें सब ओर से सम भाव है और जो परमार्थ साधन के लिये यत्न में लगे हैं; प्राणीमात्र के हित में तत्पर हैं; ऐसे ऋषि जन ब्रह्म के साक्षात्कार से निर्वाण पदवी पा गये हैं--

आगे के श्लोक में जीवन् मुक्त का बहुत अच्छा लक्षण कहा गया है--

जितेन्द्रियमनोबुद्धिर्मुनिर्मोक्षपरायणः।
विगतेच्छाभयक्रोधो यः सदा मुक्त एव सः॥

जो इंद्रियां मन और बुद्धि को वश में किये है मुनि हो मोक्ष मार्ग में तत्पर है जिसे इच्छा भय क्रोध कुछ नहीं है वह जीतेही मुक्त है--

आगे छठवें अध्याय को इस तरह पर आरम्भ किया है कि कर्म के फल का आसरा न रख जो अपने कर्तव्य कर्म को करता जाता है वही योगी और वही सन्यासी है--विना संकल्प विकल्प को त्यागे कोई योगी नहीं हो सक्ता मन से उन्हें त्याग हम चाहो जहां रहें हमारे योग साधन में हानि नहीं पड़ेगी--आत्म निर्भरता का पोषक ऐसा दूसरा श्लोक बहुत कम मिलेगा जैसा यह है--

उद्धरेदात्मनात्माननात्मानमवसादयेत्।
आत्मैवह्यात्मनो बन्धुरात्मैव रिपुरात्मनः॥

हम अपने से आपही अपना उद्धार कर सकते हैं अपनेही काम से अपने को आप नीचे गिरा देते हैं--हम अपने आप अपने मित्र हैं; आपही अपने शत्रु हैं--अर्थात् भला काम करनेवाला बहुधा सबों का मित्र होता है बुरा काम करने वाला शत्रु--किसी दूसरे को अपना मित्र या शत्रु कहना नितान्त भूल है--पुरुषार्थ या मरदानगी का खातिमा है--बोना पार्ट रणजीत सिंह प्रभृति इस के उदाहरण हो गये हैं--ऐसे को कभी किसी काम में दूसरे से सहायता लेने की आवश्यकता नहीं हुई--सम दृष्टि को कौन सा बड़ा लाभ है सो कहते हैं--

यो मां पश्यति सर्वत्र सर्वं च मयि पश्यति।
तस्याहं न प्रणश्यामि सच मे न प्रणश्यति॥

भगवान् कहते हैं सम दृष्टि हो जो मुझे सब ठौर व्याप्त देखता है और यह समस्त स्थावर जंगम जगत् मुझ में देखता है उसको मैं सदा अविनाशी हूं और न वह मुझे कभी नाशवान् है--और भी--"आत्मौपम्येन सर्वत्र समं पश्यति यो र्जुन--सुखं वा यदि वा दुःखं स योगी परमो मतः"

जो अपने समान सब ठौर सब को एक सा देखता है सुख और दुख दोनों जिसे एक है वही श्रेष्ट योगी है—आगे यह देखलाते हैं कि मन बड़ा चंचल है इसे स्थिर या अपने काबू में कर लेने की दोही उपाय है या तो क्रम २ उसे अपने काबू में लाने का अभ्यास करता रहै या संसारिक बस्तुओं से बैराग्य—जो संसार के भोग विलास से अपने को नहीं रोकते वे तो कभी मन को काबू में लाही नहीं सकते न उन को योग सिद्ध हो सकता है--हां अलबत्ता जो संयतात्मा अर्थात् विषय बासना से अपने को रोके हुये हैं वे लोग उपाय करने से मन को स्थिर कर योग प्राप्त कर सकते हैं—योग इत्यादि जितने साधन हैं बिना श्रद्धा के जिसे हम विश्वास भी कह सकते हैं सब व्यर्थ हैं—श्रद्धावान् भजते यो मां स मे युक्ततमो मतः--शेष

महाकवि बाग भट

इस महाकवि का दूसरा नाम बाहभट भी है और यह बाग भट वैद्यक की वृहत त्रयी वाले बाग् भट नहीं हैं मत के यह जैन धर्मावलम्बी थे—देश में जब जिस बात की तरक्की होने लगती है तब यह कोई विशेष नियम नही रहता कि अमुक जातही के लोग उस खास बात में प्रवीण या कुशल हों बरन सर्व साधारण में उसका एक प्रवाह वह निकलता है—धारापति राजा भोज देव के समय कुम्हार तक कवि था—सिवाय इस कवि के जैनियों में हेम चन्द्र सूरि और भट्टार हरि चन्द्र आदिक कई एक बड़े प्रसिद्ध कवि और पण्डित हुये हैं हेम चन्द्र का कोश और गण पाठ बड़े प्रतिष्ठित और माननीय ग्रन्थ हैं—दूसरे परिशिष्ट नाम का एक ग्रन्थ भी इनका बनाया है जिसमें तीर्थङ्कर तथा जैन दिगम्बरों का वैदिक धर्म्मावलम्बियों पर दिग्बिजय का हाल लिखा गया है—भट्टार हरि चन्द्र का कृत धर्म शर्म्माभ्युदय नामक महा काव्य देख बोध होता है कैसे असाधारण कवि हरिचन्द्र थे जिसके सम्बन्ध में यह पद्य है—"भट्टार हरिचंद्रस्य पद्यबन्धो नृपायते"

अब प्रस्तुत कबि के काव्य की समालोचना में जहां तक मालूम हुआ है इनके ४ ग्रन्थ बड़े प्रमाणिक हैं-काब्यानुशासन; बाग् भटालंकार; शृङ्गारतिलक; छन्दोनुशासन; यह अपने को कौन्तेय अर्थात् अर्जुन के बंश में लिखते हैं "कौन्तेय कुल कमल विकासनैक भास्करस्य" इन के पिता का नाम नेमिकुमार और मेदपाट मेवाड़देश के रहने वाले थे-राहड़ पुर और नलोटक पुर दो नगरों के नाम इन्होंने और दिये हैं पर ये दोनो कहां पर थे और अब किस नाम से विख्यात हैं कुछ पता नहीं लगता-अपने लेख में दण्डी और बामन दोनों का नाम इन्होंने दिया है इस्से बोध होता है यह दण्डी और वामन के पीछे हुये हैं-बामन बड़े प्रसिद्ध षैयाकरण थे प्रक्रिया कौमुदी बामनही की बनाई हुई है और काव्यादर्श दसकुमार आदि कई ग्रन्थ के कर्ता महाकवि दंडी को संस्कृत का छात्र हो कौन न जानता होगा-उन दोनों नगरों के नाम इस तरह पर दिये हैं "कारितामरपुरपरिस्यर्धिश्रीराहड़पुर प्रतिष्ठापित"-इससे मालूम होता है कि यह राहड़ पुर के रहने वाले थे-मेद पाटा देश की प्रशंसा में यों लिखा है-"सकलजनचेतश्चमत्कारित मेदपाटविषयप्रतिष्ठितश्रीमत्वाश्र्वजिनयात्रामहोत्सवसमुद्भूताद्भुतयशः प्रसरपूरिताशेषभुवनाभोगस्य"-नलोट पुर में इनके पितानेमिकुमार ने २२ जैन मन्दिर बनवाये थे जिस का हाल यों लिखा है -"निजभुज युगलोपार्जितार्जितवित्तजातजनितनलोटपुरप्रतिष्ठितत्रिभुव-नाद्भुतश्रीनाभिसंभवजिनसदनप्राग्भागनिर्मापितद्वाविंशतिदेव गृहिकाम्खडलस्य"-अपनी माका नाम महादेवी लिखा है यथा "सकलसीमन्तिनीसीमन्तरत्नायमानसुग्रहीननामधेय श्रीमन्महादेवी कुक्षिशुक्तिशौक्तिकेयस्य" और पिता की प्रशंसा में यों लिखा है- "वसुन्धरावधूहृदयहारस्य श्रीनेमिकुमारस्य नन्दनः"-और अपनी प्रसंसा इस तरह पर बड़े प्रढौक्ति के साथ किया है-"विनिर्मितानेकनव्यभव्य नाटकच्छन्दोलंकारमहाकाव्यप्रमुखमहाप्रबन्धबन्धुरो अपारतरशास्त्र सागरसमुत्तरणतीर्थायमानशेमुषीसमभ्यस्तसमस्तानवद्यविद्य विनोद कन्दलितसकलकलाकलापसंपुटो महाकवि' श्रीवागभटः" अपने काव्य में कर्णदेव के पुत्र जयसिंह की कई श्लोकोंमें प्रशंसा किया है-

जगदात्मकीर्तिशुभ्रं जनयन्नुदामदोः परिघः
जयति प्रतापपूषा जयसिंहः क्ष्माभृदधिनाथः ॥

जय सिंह का समय ईस्वी सन् १०८३ से ११५४ तक निश्चय किया गया है वही समय इस कवि का भी है–बाण मयूर माघ भारवि मलचम्पूकार त्रिविक्रम सबों के श्लोक उदाहरण में इन्होंने लिखे हैं–हमें तो कुछ ऐसी शंका होती है कि गीत गोबिन्द वाले जयदेव के पीछे यह हुये हैं–अब थोड़ा सा इनके लेख की समालोचना भी करते हैं–साहित्यदर्पण कुवलयानन्द काव्यादर्श में जो कुछ अलंकार रीति और रस निरूपण के विषय में लिखा गया है उसे बागभट ने बहुतही सूक्ष्म में लिख काव्य रसिकों का सन्तोष कर दिया है–काव्यानुसाशन में पहिले सूत्र के ढंग पर वार्तिक में लिख स्वकृत उसी वार्तिक की व्याख्या में साहित्य के एक २ अंग का विशद विस्तार किया है–इस ग्रन्थ का नाम काव्यानुशासन है–सच २ यह काव्य पाठियों के लिये अनुशासन अर्थात् शिक्षा है–संस्कृत के साहित्य में इस कवि का लेख भी बड़ा चमत्कार और नई उक्ति युक्ति का अवश्य मानना पड़ता है–

चन्द्रोदय के बर्णन में कवियों की अनूठी२ उक्ति युक्ति ।

एक कवि ने चन्द्रोदय के बर्णन में बिलकुल अनूठी युक्ति इस तरह पर कहा है—

लक्ष्मीक्रीड़ातडागं रतिधवलगृहं दर्पणो दिग्वधूनां पुष्प
श्यामालतायास्त्रिभुवनजयिनो मन्मथस्यातपत्रम् । पिण्डीभूतं
हरस्य स्मितममृतसरित्पुंडरीकं शशांको ज्योत्स्नापीयूषवापी
जयति सितवृषस्तारकागोकुलस्य ॥

यह चन्द्रमा लक्ष्मी अर्थात् सौन्दर्य की अधिष्ठात्री देवी का क्रीड़ा सर है; काम पत्नी रति का धवलगृह है; दिशा बधूटियों के मुख देखने का दर्पण है; अन्धकार एक श्यामलता है उसमें यह सुफैद फूल फूला है; त्रिभुवन विजयी कामदेव का श्वेत छत्र है; महादेव का अट्टहास है जो गोल २ एक लोंदा सा बन्ध गया है; अमृत की नदी का श्वेत कमल है; चान्दनी रूप अमृत की बावली है; अथवा आकाश के सब तारे गौओं का झुण्ड है उन के बीच यह सुफैद बैल है—

प्रसन्न राघव में जय देव ने चन्द्रोदय में यह उपेक्षा किया है—प्रेमी के विरह सन्ताप तापित को कामाग्नि में झुलसाने को यह दिन मणि सूर्य है; तारा रूप मोतियों के हार का यह नायक मणि सुमेर है; कन्दर्प सीमन्तिनी रति की कांची का मध्य मणि है; अथवा चंडीश महादेव के जटा जूट का चूड़ामणि है; या यह गगन कानन का केसरी है; अपने किरण रूप तीखे नखों से अन्धकार मत्त गज के कुम्भ को विदीर्ण करने से जो गज मुक्ता निकले हैं वेही ये सब तारे है—

नीचे का श्लोक भी चन्द्रोदय के बर्णन में बड़ी अनूठी उत्प्रेक्षा और रूपकालाकार का है—

संध्याशोणाम्बरजवनिका कामिनोः प्रेमनाट्यं नान्दी भ्राभ्यद्भ्र
मरविरुतं मारिषः कोपि कालः। तारापुष्पांजलिमिवकिरन्
सूचयन् पुष्यकेतोर्नृत्यारंभं प्रविशति सुधादीधितिः सूत्रधारः॥

उस अद्भुत नाट्य शाला में जिसमें सन्ध्या के समय का लाल आकाश मानो जवनिका अर्थात् भांत २ के परदे हैं; दो कामी जनों का प्रेम मानो इस नाट्य शाला का नाटक है; चारो ओर फूलों पर जो भौरे गूंज रहे हैं वही इसमें मानो नान्दी पाठ हो रहा है; काम क्रीड़ा का यह उचित समय यहां नाट्य है; ऐसी अनोखी नाट्य शाला में चन्द्रमा सूत्र धार हो आकाश में सब ओर छिटके हुये ताराओं को मानो पुष्पांजलि सा फेंकता हुआ कामदेव के नृत्य के आरम्भ की सूचना देता प्रवेश करता है—और भी—

रोदसी कूपमण्डूक कियदेष प्रकाशते ।
चन्द्रमा यदयं देव त्वत्कीर्तेः प्रतिगर्जति ॥

किसी राजा की कीर्ति के बर्णन में कवि कहता है—आकाश मंडल रूप कुये का मेढ़क चन्द्रमा बापुरा कितना प्रकाश दे सक्ता है—तब महाराज आप की कीर्ति के प्रकाश के मुकाबिले किस बूते पर यह उससे तुलना करने को गरज रहा है—तात्पर्य यह कि आप की कीर्ति का प्रकाश इतना अधिक है कि चन्द्रमा का प्रकाश उसके सामने कुछ नहीं है अतएब यह उसके मुकाबिले कूप मण्डूकवत् सा हो रहा है—बड़ी उत्तम कविता चन्द्रोदय की इस श्लोक में है—

देव और उपदेव ।

अंगरेज़ी में एक गाड्स होते हैं एक डिमी गाड्स होते हैं गाड्स देवता को कहते हैं डिमी गाड्स आधे देवता या उपदेव कहलाते हैं—हमारे यहां भी इन्द्र बरुण कुबेर आदि पूरे देवता कहे गये हैं इनके उपरान्त जैसा अमर में लिखा है—

विद्याधरोऽप्सरो यक्ष राक्षो गन्धर्व किन्नराः ।
पिशाचो गुह्यकः सिद्धो भूतोऽमीदेवयोनयः ॥

अर्थात् विद्याधर से शुरूकर यक्षराक्षस भूत प्रेत पिशाच ये सब देव योनि विशेष हैं—तात्पर्य यह कि उनमें ज़ियादह मात्रा तो आदमी का रहता है कुछ २ कहीं २ किसी बात में कुछ खसलत इनमें देवताओं की भी आगई है—इन दिनों की राजनीति और शाशन प्रणाली में ये एंगलो इण्डियन अफशियल्स कर्मचारी वर्ग देव गण अर्थात् पूर्णतया इन्द्र बरुण आदि देवताओं के स्थानापन्न हैं और ये उन्हीं देव गण के समान माननीय पूजनीय और सेवनीय हैं—जहां तक इन से डरै इन की इताअत और सेबा टहल की जाय हम लोगों को जो निरे मनुष्य कोटि के हैं सब ज़ेबा और उचित है—अब इनसे उतर के दोयम दरजे

वाले उपदेव या क्षुद्र देव ये म्युनिशिपेल कमिशनर हैं या उन्हीं के सम कक्ष उन बड़े कर्मचारियों के कृपा पात्र और २ लोग भी चाहो वे जो हों केवल कर्मचारियों के कृपा पात्र मात्र हों सब के सब देववत् पूज्य और मान्य हैं—फरक इतनाही है कि इन क्षुद्र देवताओं की पूजा बड़ी टेढ़ी बड़ी दारुण और भयावनी होती है—क्षुद्र देवता प्रसन्न तो बड़े मुशकिलों से होते हैं पर कोप बहुत थोड़ेही में कर बैठते हैं—यही हाल हमारे इन उपदेवों का भी है प्रसन्न तो काहे को कभी होंगे कोप न करैं यही परम सौभाग्य मानना चाहिये—क्षुद्र देवता प्रसन्न हो वशीभूत हो जांय तो उसे ऋद्धि सिद्धि किसी बात की कमी कमती नहीं रहती ; ये प्रसन्न भी हों तो उसका कोई फल नहीं—उपासक क्षुद्र देवता की बड़ी उपासना कर बलिदान आदि दे तब उसे अपने वश में लाता है ये उपदेव एलेक्शन के समय पहले उपासकही की बड़ी चार दासी खौर खुशामद करते हैं मतलब हो जाने पर कहां के तुम कहां के हम—उपासक यदि चौकसी से न रह सफाई आदि के कानून कायदों से चूक गये किसी बात में गफलत हुई कि समन आ सिर पर खड़ा हो गया तब फिर इनके दूतों को बिना कुछ न कुछ बलि प्रदान के छुटकारा नहीं—खुलासा यह कि ये म्युनिसिपेल मेम्बर और म्युनिसिपेलिटी है बड़ी टेढ़ी खीर शहरीयात के जहां अनेक क्लेश और तरद्दुद हैं उनमें म्युनिसिपेलिटी सब से बड़ा है—इन्हीं सब क्लेशों से ग्राम्य जीवन पसन्द आता है गांव वालों को ये क्लेश नहीं सहने पड़ते—उन को देव उपदेव किसी से कुछ सरोकार नहीं मोटा खाना मोटा पहिनना सूर्योदय से सूर्यास्त तक छट के मेहनत करना रात को टांग फैलाय सुख की नींद सोना—हम लोग "पंकचुअलिटी" को खोजते २ खियाते जाते हैं वहां एक बंधी रोटीन पर आराम और चैन के साथ सुख पूर्वक धीमी चलने वाली गाड़ी की पहिया के समान जीवन ढुलकता जाता है—लार्ड रिपन महोदय ने जिस समय लोकल सेल्फ गवर्नमेंट कायम किया था हम फूले नही समाते थे और सोचते थे कि बस अब हम स्वच्छन्द कर दिये गये हमको अपने देश के शासन का अधिकार दिया गया भारत में अब फिर सत युगवर्तेगा—यह कौन जानता था कि म्युनिसिपेलिटी की झंझट

अब हमे झेलना पड़ेगा और इन उपदेवों के शाशन में अब हमें रहना होगा—हम जिसे अमृत फल समझे थे वह इँदारू का तीता फल निकला—सेल्फ गवर्नमेंट आत्म शासन नहीं बल्कि "एरिसटोक्रेसी" अमीरों का शासन या उपदेव शासन या "डिसक्रेसी" अलबत्ता स्थापित किया गया—हम ऊपर कह चुके हैं कि इन उपदेवों में ज़ियादह माद्दा इनसान का रहता है और इनसानी माद्दा देव या फरिश्तों के मुकाबिले कभी नहीं ज़ोर पकड़ सकता खिताब और ऊची पदवी की लालसा उन्हें हां में हां मिलाने के लिये बाधित करती है—हमने यह भी कहा है कि आना दो आना इनमें देवताओं की भी खसलत रहती है-उसके यह माने नहीं है कि उन देवताओं का सा उदार भाव या स्वजाति पक्ष पात—बल्कि उसके यह माने होते हैं कि साहबाना मिज़ाज साहबाना वर्ताव साहबों की सी आदतें साहब लोगों की हां में [हां—कदाचित् इस शासन प्रणाली के संस्थापन समय रिपन महोदय का यह मतलब न रहा हो कि इसमें गवर्नमेंट का हस्तक्षेप किया जाय यह एक समूह निरे देशीय लोगों का हो—यदि ऐसा होता तो ये उपदेव अर्द्धदेव डिमी गाड्स न हो साधारण मनुष्य कोटि के रह सब भांत हमारा उपकारही उपकार करते रहते—यह आधा तीतर आधा बटेर अलबत्ता काहे में भी नहीं है और परिणाम उसका यह होता कि एरिसटोक्रेसी ज़ोर न पकड़ती भांत २ के इतने गाढ़े टैक्स न होते और जो कुछ उगाहा जाता केयल हमारेही फाइदे में लगाया जाता—

हमारे यहां की खुली नाली की बद बू हम लोगों के दिमाग के रेज़े २ किये डालती है सब २ चेष्टा कर थके पर किसी म्युनिसिपेल मेम्बर का ध्यान इधर न गया--बन्दरों की बाढ़ से कितनी तकलीफ हम लोगों को पहुंच रही है अभी थोड़ेही खर्च में इस आफत से हम रिहाई पा सकते हैं कि बन्दर पकड़ २ जंगलों में छुड़वा दिये जांय पीछे बहुत सी फिकिर करने पर भी कुछ न होगा पर म्युनिसिपलटी का तवज्जोह इस ओर नहीं होता—इसकी बड़ी चौकसी रहती है कि मकान बनवाने में तुम ने इतनी इंच ज़मीन दबाली बीसों बार के

नाप जोख में भी रिहाई नहीं होती—फिर भी यही कहने का मन होता है धन्य हो ग्रामीण भैया तुम बड़े सुखी हो बिगड़ों ज़मीन वर्ताव में लाते रहो कोई कुछ कहने सुनने वाला नहीं है—स्वच्छ जल वायु तुम्हे कैसा दूढ़ांग किये है हम सफ़ाई की इतनी हाय २ पर भी रुग्ण पक्के आम से ज़र्द बने रहते हैं न देव न उपदेव किसी की आराधना या सेवा टहल कुछ कारगर नहीं होती—पलेगन में होह टैक्स की तैयारी अलबत्ता हो रही है जिसकी समालोचना हम फिर करेंगे——

कर्मचारियों की कृपादृष्टि में त्रुटि।

हमारा सम्बाद पत्र नहीं है न सम्बाद देने का कोई भार हम पर है पर तौभी कभी २ कोई २ बात क्रम संगत न देख "मुखमस्तिचव क्तव्यम्" के अनुसार बिना कुछ कहे रहा नहीं जाता—यहां स्थानीय कारोनेशन के जल में कुछ लोगों को सर्कार की ओर से प्रतिष्ठा पत्र गत वर्ष में प्लेग की काररवाई के दिये गये हैं—पर यह काररवाई स्थानीय कर्म-चारियों के रिझानेही मात्र को थी दो एक ने कुछ किया भी तो उनका लक्ष्य जितना सर्कार में अपनी खैरखाही जमाने का था उतना प्लेग पीड़ितों की रक्षा और उन्हें ढाढ़स दिलाने का न था—प्लेग पीड़ितों का सच्चा सहायक जो आदि से अन्त तक बराबर डटा रहा शहर खाली हो गया था पर यह नहीं हटे सौथ तथा नार्थ कोतवाली वार्ड में लोगो को बराबर ढाढ़स बंधाता रहा और अपने पास का बहुत कुछ खर्च डाला—जिसके घर में कोई न रहा वहां के मृतकों को खुद आप ढोकर शवनिर्यातन स्थान तक पहुंचाया—यह पुरुष लाला दुर्गाप्रसाद हैं जिसको किसी ने बात भी न पूछा और वह इसलिये कि उक्त लाला सर्कार में प्रतिष्ठा पाने को जिसमें कर्मचारियों की नोटिस में हमारा यह काम पहुंचे इस खयाल से इसे नहीं किया बरन जो कुछ किया सब अपने देशी भाइयों के साथ सच्ची हम दरदी के भाव से—हाँ कदाचित् यह लाला तालीमयाफ़्त होते तो उन्हें भी यही सूझती पर वहां तो ऐसी इज्ज़त

पाने की कोई परवाह नहीं मनुष्य का मनुष्य के साथ कर्तव्यकर्म समझ उन्होंने ऐसा किया—ऐसेही लोग बन्धु स्नेह के नमूने हुये हैं—स्माइल्स आन क्यारेक्टर के ढंग की यदि कोई पुस्तक हमारे यहां निर्माण की जाय तो लाला दुर्गा प्रसाद का यह काम उसमें दर्ज होने लायक है—अस्तु ऐसे को ईश्वर ऐसे भले काम का फल देता है जो चिर-स्थायी हो बना रहता है चार दिन की यह क्षणिक प्रतिष्ठा किस काम की हां यह अलबत्ता यहां पर सुघटित बोध होता है 'जिसे पिया चाहें सोई सोहागिन"—

कभी हमारी दशा में भी परिवर्तन हो सक्ता है

हमारे सहयोगी कैसी उन्नति कर रहे हैं एक हमी नित्य संकुचित होते जाते हैं—इधर हम को नेत्र के विकार की शिकायत थी सो ईश्वर की दया दृष्टि से अब हमें उस ओर से भी कोई ऐसी बात न रही कि हम आगे न चल सकें—यत्किंचित् नेत्रों में दुर्बलता रही भी तो हमारा मस्तिष्क तो दुर्बल नहीं हुआ—दूसरा कारण हमारे संकुचित होने का समय पर न उपस्थित होना है—सो इसमें भी हमारा कोई दोष नहीं है कुछ दिनों से हमने यह नियम कर लिया था कि जितना चादर देखें उतना पैर फैलावें इसी से समय पर उपस्थित होने में त्रुटि होती गई—हमारे देश में अभी हिन्दी के प्रौढ़ पाठक बहुत थोड़े हैं इधर उधर के समाचारों से दिल बहलाने वाले अलबत्ता अब कुछ थोड़े घने हो गये—उन के हम काम के न ठहरे बचे वही इने गिने डेढ़ बकाइन मियां बाग तले—उन्हीं से हमें सरोकार ठहरा उनमें भी जब हम महीनों तक उन की सेवा में न पहुंचे तब अधैर्य हो क्यों न किनारे कश हों—सच तो यों है कि मासिक पत्र या मेगाज़ीन कब कोई समय से निकलती है कुछ न कुछ देर होही जाती है पर हम को अभाग वश ऐसी २ दुर्घटना होती गई कि बरसों तक प्रगट न हो सके—अब मन बहुत करते हैं एक बार फिर ज़ोर बांधें पर किस बूते पर; एक से एक महामान्य श्रीमन्त उदार चेता पड़े हैं पर हमारे लिये जगत शून्य है कोई अवलम्ब

देने वाला न मिला हमारे देश में ऐसे २ धनी हैं कि एक महानुभाव दया के भाव से खड़े हो जांय तो हमारा डूब ही जाना दुष्कर न हों- सब से कठिन निज के प्रेस का न होना है प्रेस वाले बहुतही बहुत झिखाने और खिझाते हैं हम चार महीना पहिले इस बार निकलते यदि प्रेस के चंगुल में न पड़े होते-कोई महामहिम हमे एक छोटा सा प्रेस करा दें तो हम चिरस्थायी हो जाँय फिर देखिये हम अपने पढ़ने वालों को कैसे मनो रंजक होते हैं और अब हमारा कुछ ऐसाही संकल्प है देखैं कौन उत्साही इससे अग्रसर होता है-अन्त में हम उन संपादकों को बड़ा धन्यवाद देते हैं और उन के चिर वाधित रहैंगे जिन्होंने अपना पत्र भेजने से मुह नहीं मोड़ा और हमारी बड़ी प्रतिष्टा किया- भारत मित्र; हिन्दी बंगबासी; श्रीवेंकेटेश्वर समाचार इन सबों को बहुतर धन्यवाद है-एक सरस्वती को न जानिये कहां की कुमति ने आघेरा कि मुह मोर बैठी हमें उसकी परवाह भी नहीं है-

ग्रन्थ आलोचना।

श्री

यह पुस्तक २ भागों में अंगरेज़ी नोवेलस का अनुवाद है- कन्हैया लाल अग्रवाल ट्रैन्सलेटर सदर बोर्ड माल संयुक्त प्रदेश इलाहाबाद कर्तृक-ग्रन्थकर्ता महाशय ने इसके अनुवाद करने में अच्छा परिश्रम किया है जो पढ़ने वालों को भली भांत प्रगट हो सक्ता है इसलिये कि यह अनुवादही नहीं मालूम होता बरन सब तरह पर Original निज की गढ़न्त प्रतीत होती है—सब से उत्तम बात इस पुस्तक में हमारी समझ में इसकी भाषा है जो न तो बड़ी क्लिष्ट संस्कृत है न बड़ी २ अरबी फारसी की लुंगते इसमें हैं साथही इसके भाषा मधुर और सुहावनी भी है-ग्रन्थकार का यह पहिला परिश्रम है जो इनको उत्तेजना उत्साह और सहायता दी जाय तो हिन्दी के बहुत अच्छे लेखक हों—रहा इसका प्लाट सो इसके बारे में हाथ कंगन को आरसी क्या रसिक जन इसको मंगावें और पढ़ें आपही मालूम हो जायगा-मूल्य दोनों हिस्सों का २) पुस्तक ग्रन्थकार को लिखने से मिल सक्ती है——

अशोक का जीवन चरित्र ।

ठाकुर सूर्य कुमार लिखित-पुस्तक के पढ़ने से विदित होता है कि ग्रन्थकर्ता को कहां तक ऐतिहासिक विषयों की अभिज्ञता है और इस में समवेत विषयों को इकट्ठा करने में ग्रन्थकार ने कितनी परिश्रम किया है-सब तो यों है कि जैसा इस छोटी सी पुस्तक की लेख प्रणाली है उसे अलबत्ता शुद्ध हिन्दी कहैंगे और लेख में गाम्भीर्य क्या वस्तु है सो भी इसके पढ़ने से मालूम हो जाता है मूल्य ।) पुस्तक ग्रन्थकर्ता को ग्वालियर में लिखने से मिल सक्ती है-

---

श्रान्त पथिक ।

अंगरेज़ी भाषा के प्रसिद्ध कवि गोल्डस्मिथ के ट्रावेलर का शब्दार्थ अनुवाद-आधुनिक हिन्दी साहित्य के स्तम्भ स्वरूप पं० श्रीधर पाठक के नाम की सुखद पदावली ने किसके कर्णकुहर में न प्रवेश किया होगा तब उनकी किसी विशिष्ट रचना की आलोचना केवल पिष्टपेषण मात्र है फिर भी-"तद्गुणैःकर्णमागत्य चापलाय प्रणोदितः"-वास्तव में समालोचना का फ़ाइदा उन्हें है जिन्होंने सात जन्म में कभी कोई एक छोटी सी पुस्तक इधर उधर से जोर बटोर लिखा और संपादकों को भेंट इस उम्मेद पर करने लगे कि सम्पादक साहब ऐसी समालोचना करदें कि लेखक मण्डली में हम बाचस्पति के सदृश अगुआ समझे जांय और पुस्तक इतनी बिकजाय कि कुबेर के खज़ानची हमी हो बैठें-अस्तु खड़ी बोली में जहां तक लालित्य और माधुर्य आ सकता है उसमें किसी तरह त्रुटि नहीं इसमें की गई तौ भी इतना अवश्य कहैंगे कि श्रीधर की रचनाओं में प्रथम तो एकान्तवासी योगी कहा जा सकता है द्वितीय ऊजड़ गांव तृतीय श्रेणी में हम इसे रखते हैं-पंक्ति प्रति पंक्ति शब्दार्थ मिलता जाय और उसमें भी कविता के समस्त गुणों में चूक न होने पावे सहज नहीं है-

धाराधर धावन

मेघदूत का पद्यात्मक अनुवाद राय देवीप्रसाद बी-ए-बी-एल-कृत अनुवाद पढ़ मालूम होता है ग्रन्थकर्ता को कहांतक कबिता में प्रतिभा है अनुवाद बहुत ललित और सरस है-ऐसाही अनुवाद कालिदास की कविता के अनुरूप है यदि लाला सीता राम भी इसी प्रणाली का अनुसरण करते तो उनका अनुवाद भी सरस कहा जाता--मूल्य दोनों भागों का ।॥) ब्राह्मण प्रेस कानपुर में मुद्रित ग्रन्थ यह अवश्य रसिकमन भावन और संग्रह के योग्य है—

के–बी–रेले कंपनी का १९०३ का क्यालेंडर

यह क्यालेंडर निरी अंगरेज़ी महीनों की तारीख जानने के लिये नहीं है इसमें सम्वत् शाका और हम लोगों के महीनों का विबरण प्रत्येक छोटे बड़े तिहवार सब मिती वार दिये हुये हैं—हर एक पेज के पृष्ठ भाग में वैज्ञानिक बिषय की बहुत सी बातें जैसा कोहिरा बादल इत्यादि कैसे बनते हैं दी हुई हैं-हम इस यंत्री को धन्यवाद पूर्वक स्वीकार करते हैं—

प्लेग विष भैषजय ।

डाक्टर देशराज रणजीत सिंह एल-एम-एस कृत इसमें प्लेग रोग का इतिहास निदान चिकित्सा आदि उत्तम रीति पर दी गई है निः-सन्देह यह पुस्तक प्लेग विष का उत्तम भैषज्य है मिलने का पता इलाहाबाद स्टैन्ली रोड नं०-१-मूलय ।)

नामावली ।

बुद्धिमानोंने निश्चय किया है कि आदि मध्य अवसान में भगवन्नाम संकीर्तन सदैव कल्याणकारी होता है यही सोच विचार आज हम नामा वली का संग्रह करते हैं कदाचित् इस नाम संकीर्तन के फल में हमारे ग्राहक गण जो समय से उन की सेवा में न उपस्थित होने के कारण हम से रूठ हम पर अपना छोह छोड़ बैठे हैं कृपालु हो अपनी सेवा

के लिये हमे पुनः अनुगृहीत कर लें और हमारे अपराधों को भूल जांय—

हे अशरण शरण–त्रिविक्रम चरण–भव जलधि सन्तरण—बिषम दुर्गार्तिहरण–सकल मंगल करण–लोकरावण रावण विद्रावण–हे शमन यातनाशमन—दैत्यदानव दमन—अघौघविध्वंसन–गरुड़ासन—देवकी नन्दन--कंशनिकन्दन--पतितपावन--कलिकलुषनशावन–निजभक्तभावन सन्त मन रंजन--भव भय भंजन–दुष्ट दल गंजन--अमल कमल दल लोचन--पाप विमोचन--रघुकुल भूषण--जित खर दूषण--जानकी जानि–रथ चरण पाणि--जगच्छरण्यम्–भूरिवरेण्यम्--जय जय जय--

अच्युत जयजय--आर्त कृपामय--करुणा वरुणालय--इन्द्रमखार्दन–ईतिविशातन–उज्वल विक्रम--ऊर्जित विभ्रम--ऋद्धिधुरोद्धुर--दुरितक्षयकर–दीनदया पर–एधितवल्लव–ऐन्दवकुलभव–ओजःस्फूर्जित–औग्र्यविवर्जित–अष्टापदपद–शोभित कालिन्दीतट–कंकणयुत कर–खण्डितखलवर–जयजयनटवर–

गतिजित कुंजर–घनघुसृणाम्बर–टंकितभूधर–हलधर सोदर–गोवर्द्धनधर जलजोद्भवनत–जितदानव शत--फणवर कुंडल--नखरधृताचल–रंजित करतल–नन्दसुखास्पद--पंकज सम पद--फणनुति मोदित--वन्धुविनोदित–मंजुल भालक--भंगुरितालक--यष्टिलसद्भुज--रम्यमुखाम्बुज--ललितविशारद--पदनुत नारद--शर्मदचेष्टित-- षट्पदवेष्टित--

जयनट नागर--सब गुन आगर–करुणासागर--विधिधि गुणाकर–यदुकुल नायक–सब सुखदायक--विश्वव्यापक—त्रिभुवन मापक–कन्दर्प लजावन–जन मन भावन–ब्रह्माण्डनिकाया विरचित माया–हिरण्यरेता--असुर विजेता–हृषीकेश–प्रद्योतित दिनेश–

जय जय जनार्दन–कालिय मर्दन–नरोत्तम—पुरुषोत्तम–परेश–परमेश–भ्राजिष्णु–सहिष्णु–विश्वात्मन्–परमात्मन्–भूमन् भूतात्मन्--अमेयात्मन्–जगदाधार–विश्वविहार–प्रेममय–दयामय–लावण्यमय–दिनमणि मण्डन–भवभय खण्डन–युगल किशोर--श्री मुख चन्द्र चकोर–सुर कुल केलि निदान–त्रिभुवन भुवन निधान--श्रीपांडुरंगजगदंतरंग--नव मेघ रंग--सारंग नयन–वेदान्त वेद्य–सिद्धान्त सेव्य–

श्रीधर सच्चिद् घन सुखकारी--यादव यमुनना तीर विहारी ।
माधव मथुरा नाथ मुरारी--आद्य अनन्त अनघ असुरारी ॥

आर्य यंत्री

जितनी यंत्रियां अब तक निकलीं यह मुझे सर्व श्रेष्ट जंचती है यह यन्त्री तो हई है तिथि पत्र का भी इससे काम निकल सक्ता है अन्त में मदालसा उपाख्यान आदि कई बातें इसमें बहुत अच्छी दी गई हैं दूसरे आर्य समाज कहां तक काम कर रही है सो भी सब इसमें दिया है मूल्य ।-) कर्नाल आर्य समाज से प्रकाशित की गई है—

सेव्य सेव्यक निर्द्धारण

अच्छा मालिक अवश्य प्रसंसा के योग्य है किन्तु मालिक में जो कुछ अच्छापन है उसका जौहर तभी खुलता है जब उसे भला सेवक मिले--उचित न्याय; या सच्चा इनसाफ; अपने सेवक के साथ सहानुभूति समभाव, अलोलुपता, सेवक सन्मान, दयालुता, आदि मालिक के उत्तम और प्रसंशनीय गुण हैं--तात्पर्य यह कि जो अच्छा मालिक बनने का दावा बांधता हो उसमें ये सब नहीं तो अधिकतर गुण तो अवश्य होने चाहिये--अब सेवक के गुण टटोलिये तो अपने मालिक से डरना सदा उसके बशंबद रहना, ईमानदारी, प्राणपण के साथ अपने मालिक का हित विचारना और करते रहना, कार्य क्षमता, अपना नुकसान, सह कर भी स्वामी का भला करना आदि सेवक के भले और उत्तम गुण हैं--हमारे सामयिक सेव्य अपने स्वामित्व के गुण में फूले नहीं समाते और इस बात का दावा बांधे हुये हैं कि यह हमारे स्वामित्व का गुण और Sence of Justice उचित न्याय की पहिचान या परख है जो देश के अपने अधिकार में किये हुये है--मानते हैं कदाचित् यह उनका दावा सर्वथा झूठ नहीं है पर निरा यही कारण उन के यहां पूर्ण वैभव का नहीं हो सकता इसका अधिकतर हेतु सेवक के सेवकता के विशिष्ट गुणों का है उनके स्वामित्व गुण में तो बहुधा त्रुटि पाई जाती है पर सेवक उनकी सेवा सर्वतोभाव से पूर्णतया अपने सेवक-ता के गुणों से कर रहा है--हां यह हमारे सेव्य के अक्षय पुण्य हों

चाहो उनके भाग्योदय हों कि ईश्वर की प्रेरणा से उन्हें ऐसे सेव्य और प्रभु भक्त वशंवद और खैरखाह सेवक मिले हैं जिन्होंने अपने प्रभु की भक्ति को एक सामान्य धर्म समझ रक्खा है और उसी के अनुसार थोड़े में भी सन्तोष कर अपने मालिक की सेवा में तन मन से तत्पर हो रहे हैं मेक्समूलर साहब ने ऐसाही लिखा भी है सो बहुतही यथार्थ है--लार्ड कुर्ज़न महोदय को इस बात की परख हुई या नहीं हाल के दिल्ली दरबार से जैसा लोग असन्तुष्ट से आये उससे यह सन्दिग्ध सा है महाराणी के गत जुबली महोत्सव में सेवक के गुणों की पूरी प्रतिष्ठा की गई थी जहां देशीय फौज अग्रसर की गई थी और भी कई बातों से इनका भरपूर सन्तोष कर दिया गया था पर इस दिल्ली दरबार के महा मेले में जैसा कुछ विषम भाव झलक मार रहा था उससे हम सबों को यही जान पड़ा कि सेव्य प्रभुवरों का महत्व सर्वोपरि है--हमारे देशीय राजा महाराजा परस्पर की स्पर्धा बश अपना २ वैभव दिखाने में बहुत दिनों के लिये बहुधा कर्ज़दार हो गये पर उपकार उनका तथा देश का कोई भी दृष्टि गोचर न हुआ-बड़े २ राजा सब इसी खयाल में रहे कि उस बार के दरबार के समान हमें खिताब और पदवी मिलेंगी तोपों की सलामी बढ़ा दी जायगी सो भी कुछ न हुआ औकात से ज़ियादह खर्च कर बहुतेरे ऋणी हो लौट आये और छोट भैयों को तो ठंढ आदि बहुत सी बातों का क्लेश अलबत्ता सहना पड़ा पर किसी ने बात भी न पूंछा हां इस अभूतपूर्व समारोह को देख नेत्र उन के तृप्त हो गये इतनाही सही—

सूचना

एक हमारे मित्र ने १०) हमें निज का प्रेस ने स्थापित करने में सहायता के लिये देने कहा है जो हमारी सहायता इसमें करैंगे उन का नाम हम आगामी अंक में धन्यवाद पूर्वक प्रकाश कर देंगे यह दृढ़ हो गया है कि जब लों निज का प्रेस न होगा पत्र में चिरस्थायित्व न आवेगा इससे इस कार्य में हमारी सहायता अपूर्व पुण्य और हम पर चिरस्मरणीय एहसान है-देखें कौन २ हमारे प्रेमी इसमें अग्रसर होते हैं हमारा संकल्प तो कुछ ऐसाही है कि आगामी अंक हम अपने निज के प्रेस में निकालें-यदि हमारा लेख कुछ उपकारी और हिन्दी साहित्य का वृद्धि कारक समझा जाता हो तो इस कार्य में हमारी सहायता सर्वथा उचित है किम्बहु—

हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै॥
सूझै बिबेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २५ सं० १।२। प्रयाग जनवरी फ़रवरी सन १६०३ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥≡)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —o*o— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १=)

—:oo:—



हिन्दीप्रदीप

जि० २५ सं० १।२ } प्रयाग { जनवरी फरवरी सन् १९०३ ई०

हमारा पच्चीसवां वर्ष

पांच जन्यधारी परमेश्वर की परमोदार कृपा है कि ५ तत्व रूप पांच महाभूत की बनी ५ ज्ञानेन्द्रियां तथा ५ कर्मेन्द्रियां उभय साधारण मन और अपनी पंचतन्मात्राओं के साथ लिये महत्तत्व अहंकार और सबों की अधिष्ठान प्रकृति के सहित सांख्यवालों के २४ तत्व की भांति २४ वर्ष तक हमें पंच प्राणवान् किये रहीं और अब पचीसवें में प्रवेश करने योग्य बना दिया—"शतायुर्वैपुरुषः" इस प्राचीन सिद्धान्त के अनुसार २५ मनुष्य की १०० वर्ष की आयुष्य का चौथाई होता है-स्पर्श वर्णों की तरह २५ अपने पांच पांच के एक वर्ग का पचापचीस होता है-शब्द शास्त्र वालों ने क से म तक २५ अक्षरों की स्पर्श के नाम से एक अलग संज्ञा बांधा है और ये स्पर्श इसलिये कहलाये कि इन अक्षर में कवर्ग चवर्ग आदि पांच अक्षरों के अलग २ एक २ वर्ग हैं जिनका उच्चारण मुख के भीतर कहीं पर बिना छुये नहीं होता—वही दशा हमारे

इस २५ वर्ष की है प्लेग रूप महामारी के पूर्ण अधिकार में जब घड़ी दो घड़ी में काम तमाम होता है तब दो युग २५ वर्ष का ज़िम्मा कौन बांध सक्ता है—फिर भी गिरते पड़ते लड़खड़ाते जो इतनी उमर हम खे आये उसमें सच्चिदानन्द श्री हरि की पीयूष प्रवाह शालिनी दया दामिनी की द्युति का प्रभाव है—उच्चारण में स्पर्श वर्णों की भांत जिस दया का किंचित् मात्र स्पर्श हमारे गात्र में जीवन पिरोइ देने को सर्वथा समर्थ होता रहा—अस्तु अब हम अपने वाचक वृन्द को सविनय सूचित करते हैं कि हमे यहां पर एक वर्ष की त्रुटि देना पड़ता है पंचाङ्ग वाले तिथि तथा नक्षत्र की बहुधा हानि कर देते हैं और १४ कभी १३ दिन का भी पक्ष कर डालते हैं हमारे इस पंचाङ्ग रूप इस जीवन में तिथि वार तथा मास का तो कहीं ठिकाना ही नहीं वर्ष की त्रुटि या हानि की जाती है—२५ वर्ष में एक वर्ष की हानि अर्थात् सन् ईस्वी १९०२ इस पंचांग से उड़ा दिया जाता है जिन्हों ने अग्रिम मूल्य दे रक्खा है उन से दिसम्बर १९०३ तक हम न मागेंगे—जैसा हमारा संकल्प है कि निज का प्रेस हो जाता तो बहुत तरह की झंझट से बच नियत समय पर अपने रसिक पढ़ने वालों से मिला करते और पत्र में चिरस्थायित्व आ जाता; पर यह सब तो केवल कल्पना मात्र है हमारा ऐसा सौभाग्य कहां कि इस अपने उद्योग में कृत कार्य और सफल मनोरथ हों न यही होगा कि पत्र सम्पादक बनने के हौसिले को तिलांजुली दे किसी विषय पर कुछ लिखने से मुह मोड़ चुप हो बैठ रहैं; क्योंकि लड़कपन से इसका चस्का पड़ा हुआ है जो अब दिनों होने से नसूर सा हो गया यावज्जीव किसी भांत पुरने वाला नहीं मालूम होता अन्त को परिणाम यही होगा कि ऐसाही घिसलते हुये चले जायंगे—मसल है "नकटा जिया बुरे हवाल,, हम किनारे कश भी हों तो थोड़े लोग जिन्हें हमारे लेख पढ़ने का स्वादु मिल गया है वे हमें उसकाते रहते हैं उनकी प्रेरणा से फिर कमर बांध मुस्तैद हो जाना पड़ता है—पहिले का सा जोश और उमंग अब रहा नहीं लथर पथर थोड़ा चले फिर फिसल कर गिर पड़े—गिर तो पड़ते हैं किन्तु लिखने का नसूर जो दुर्व्यसन सा हमारे पीछे लग रहा है हमें चुप नहीं बैठे रहने देता ख़याल के घोड़े दौड़ते

ही रहते हैं नई उपज का कोई लेख बन गया तो मन मयूर आनन्द निमग्न हो नाचने लगता है जिस्के हर्ष की सीमा नहीं रहती—छात्र दशा में कौमुदी की फक्किका अथवा युक्लेदिस के कोई नये प्राब्लेम के हल हो जाने पर जैसा हर्ष होता था वही भाव अब इस समय मन में स्थान पाते हैं—आश्चर्य यह है कि पत्र के खरीदारों को जो वेस्ट बास्केट के भरने की चीज़ है उस्पर लिखने वालों को इतना नाज़ कि जिनके प्रमोद की सीमा नहीं रहती—हमारे इस समय के लेखकों के जुदे २ ढंग हैं कितने जो अभी लिखना सीख रहे हैं उनके लिखने का ढंग और छोटा बालक जो अभी चलना सीख रहा है दोनों का एक क्रम है—

"प्रस्खलन्तः पदन्यासे वाचा नीरागहेतवः।
सन्त्येके बहुलालापा कवयो बालका इव" ॥

छोटे लड़के दो एक कदम चले फिर लड़खड़ा के गिर पड़े बालक तोतरी बोली से दो चार शब्द जो बोलते हैं सो भी क्या कहते हैं स्पष्ट कुछ नहीं प्रगट होता ऐसा ही नये लिखने वालों को भी अपने लेख की पद योजना में प्रति शब्द में स्खलन होता है—एक शब्द लिखा फिर सोचने लगे जो कुछ लिख कर तैयार किया सो उन में विचार की प्रौढ़ता न रहने से निरा नीरास लेख हुआ—अस्तु देश में ऐसे लेखकों की अधिकाई हमारी भाषा के भाग्य की उत्कर्षता है येही अभ्यास अनुसार प्रौढ़ लेखक हो भाषा सहित्य के भण्डार भरने वाले होंगे—पर ये वेचारे भी क्या करें जब उनके लेख का कोई पूछने वाला न हो—हम लोग बहुधा सुसंपन्न समृद्धि शालियों पर आक्षेप किया करते हैं कि वे हमारी कदर नहीं करते और हमे सहारा नहीं देते किन्तु यह कभी एक बार नहीं सोचते कि हम उनके किस काम के हैं—गवइयों के गान की गमक, तबले की ठनक, सारंगी सितार हारमोनियम पयानो आदि विविध वाद्ययंत्रों की भिन्न २ तानें, रूपा जीवाओं के रूप लावण्य की लोनाई; कुछ तो इस्में से नहीं निकलती तो किस भरोसे वे आपकी कदर करें—तुम्हे अलबत्ता अपने लेख पढ़ सन्तोष होता है तब यह तो कोई न्याय नहीं है कि हम तुम्हारे मन की नहीं

करते इसलिये हम अधम हैं-सच तो यों है कि निकृष्ट अधम या अभागे हमी हैं जो इस प्रकार के दुर्व्यसन में पड़ अपनी ज़िन्दग चौपट कर रहे हैं-हमारे सहयोगियों में कितनों ने इसी लेख के बदौलत हज़ारों कमाया होगा बड़ी से बड़ी प्रतिष्ठा पाय सुख से जीवन काट रहे हैं; हमें इस २४ वर्ष में ललचाते ही बीता इतना भी न हो सका कि पत्र ही की कुछ उन्नत्ति कर देखाते-सच है "करम रेख ना मिटै करै कोई लाखों चतुराई" हमारा प्रेस करने का प्रस्ताव निरा हवाई बुर्ज़ सा मालूम होता है बिशेष कर हमारी इस गिरी दशा में जब कि एक से एक चटकीले लेख के साप्तहिक और मासिक दिन प्रति दिन प्रगट हो रहे हैं और पढ़ने वालों के मन को प्रमुदित करने का बीड़ा उठाये हुये हैं तब हम ऐसे खुर्राटों को कौन पूछे जिस्के जर्जरित मस्तिष्क के घृत लवण तैल तण्डुल की अनेक चिन्ताओं से पुरज़े २ उड़ रहे हैं-

"घृतलवणतैलतन्दुलतक्रेन्धनचिन्तया सततम्।
नश्यति विपुल मतेरपि बुद्धिः पुरुषस्य मन्दविभवस्य"॥

अन्तर्यामी हमारे चित्त का शुद्ध भाव जान किसी उदार चेता के मन में प्रेरणा कर दे तो यह कुछ दुर्घट भी नहीं मालूम होता-देश में बड़े २ दानबीर पुरुष पड़े हैं जिनका न जानिये कितना धन भांत २ के अपव्यय में उठ जाता है तब हमारा काम तो बहुत ही थोड़े में सुसाध्य है केवल मन में आजाने मात्र की देर है-

दूसरे यह कि एडिटरी भी तो इस समय एक फेशन हो गया जिन्हें थोड़ा भी लिखने पढ़ने आता है वे यही चाहते हैं कि एडिटर बनना बड़ी प्रतिष्ठा है तो हम भी एक पत्र चलाय संपादक बनैं और अपने को संसार में प्रसिद्ध करैं-पर जिनके भरोसे पत्र चलाया चाहते हैं उनका यह हाल है-जैसा कहावत है "एक भवानी कुल गांव अन्धा किसे २ आंख दें"-देश में जो बड़े धनी और बहुत बड़ी सम्पत्ति वाले हैं वे बहुधा निरक्षर होते हैं उन्हे पढ़ने लिखने की चर्चा से भी कोई सरोकार नहीं-धनियों के समूह में रुपये में १२ आना इस ढंग के निकल गये रहे एक चौथाई सो वे कहां तक पत्रों को खरीदने का भार उठाते जांय-

जहां हमने अनेक भली बुरी बात अपने शिक्षा गुरू अंगरेज़ों से सीखा और सीखते जा रहे है वहां सभ्यता का उत्कृष्टतम अंग पत्र संपादन भी एक है, किन्तु हमारे शिक्षा गुरुओं का घर विलाइत और हिन्दुस्तान में बड़ा अन्तर है, वहां की जनता में १० में ८ पढ़े लिखे केवल २ मूर्ख हैं यहां के जन समूह में इतना अधिक विद्या के प्रचार होने पर भी १० में २ सुपठित हैं तो आठ अभी कोरे मूर्ख कुन्देनातराश हैं-यूरोप के सभ्य देशों में जहां इस कदर पढ़ने लिखने की चर्चा है और इस कदर पत्र पढ़ने का शौक बढ़ रहा है कि कुली और ग्रासकट को भी जब अपने काम से फुरसत मिलती है तो वह भी थोड़ी देर के लिये दिल बहलाने को बिना खबर का कागज़ पढ़े नहीं रहता वहां पत्रों की इतनी भरमार भी ज़ेबा देती है-यहां अच्छे सुपठितों को भी जब अपने काम से फुरसत मिलती है तो चौपड़ शतरंज गंज़ीफा अथवा हाहा ठीठी से दिल बहलाव होता है-जहां समाज का ऐसा चलन है वहां पत्र संपादकों को अपने काम में अकृतकार्य होने पर खेद करना नितान्त भूल है-दैनिक और साप्ताहिक पत्रों का जब यह हाल है तब हम किस करतूत पर खेद करें कि हमे कोई नहीं पूछता जिसका कोई ढंग और कोई अंग व्यस्त नहीं है जो कुछ सब अस्तव्यस्त "तदस्ति किं व्यस्त मपि त्रिलोचने„-यहां पर हत भागिनी हिन्दी नागरी के पक्ष में भी इतना हमें और वक्तव्य है कि वंग आदि दूसरी २ भाषायें जिन से इसका सोदरा भगिनी का सम्बन्ध है उन्हे अपनी उन्नति की अन्तिम सीमा पर पहुंचते देख हमें अपने यहां के सुपठितों पर दुःख और क्रोध होता है, बंग देशियों के बीच अपनी मातृ भाषा में कुछ लिखना और बंग साहित्य की वृद्धि अपना बड़ा सौभाग्य समझा जाता है हमारे यहां के सुपठित देश भाषा में कुछ लिखना अपनी हतक और हेठी मानते हैं-रुपये की मदद भरपूर हमे नहीं मिलती नहीं सही लेख की सहायता भी हमारे लिये दुर्घट है पर इसका हमे कोई पछतावा नहीं है यदि कदर करने वाले रसिक जन दिन दूने रात चौगुने बढ़ते जांय नहीं तो इसमे सन्देह नहीं यह बड़ा करा बोझा है पावत् बुद्धि वलोदय जहां तक चल सकेगा इसके ढोने से मुह न मोड़ेंगे-इत्यलमति विस्तरेण-

ढोलके भीतर पोल।

ऊपर की यह कहावत छोटे बालक से ८० वर्ष के बुड्ढों तक में जैसा प्रचलित है वैसा ही इसकी चरितार्थता भी सुस्पष्ट है और किसी देश या जाति में चाहो इसके उदाहरण न मिलते हों या बहुत कम हों पर भारत तो इस समय इस कहावत का मानों उद्देश्य या लक्ष्य सा हो रहा है जहां की कोई ऐसी बात नहीं है जिस्मे पोल न पाई जाती हो—ऊपरी भड़क नुमाइश चटकीला पन देख चित्त चमत्कृत होता है कभी जी में समाता ही नहीं कि भीतर किसी तरह की न्यूनता या पोल है पर ज्यों २ तले तक डूब चहाओ त्यों २ ढोल के भीतर पोल निकलती जायगी—दूर न जाय हाल का दिल्ली दरबार इसका बहुत ही स्पष्ट उदाहरण है—एक २ छोटे बड़े राजा महाराजा तअल्लुकेदारों की धूमधाम देखते ही बनती थी जिनका आडम्बर चमक दमक और बाहिरी वैभव पर कदाचित् कुबेर भी संकुचाते रहे होंगे इन्द्र और वरुण भी हार मान बैठे होंगे—लार्ड कुरज़न महोदय के चित्त में भी यही समाया होगा कि निस्सन्देह भारत लक्ष्मी का केन्द्र भाग है कितना ही हो यहां का धन कभी चुकने वाला नहीं है—जो किसी कदर ठीक भी है कहां की ऐसी कामधेनु धरती है जो अत्यन्त उर्वरा होने से कई करोड़ का धन प्रतिवर्ष उगला करती है—दो वर्ष के लिये चिन टिया ढोअन बन्द हो जाय और यहां का धन यहीं रहने पावे देश का देश सोने चाँदी से मिढ़ जाय—अस्तु जिस बनावट और चमक दमक पर चित्त चकराता था उसे तले तक डूब खोजो तो वही ढोल मे पोल—इन राजा और तअल्लुकेदारों में न जानिये कितने परस्पर की स्पर्द्धा में आय बाहरी प्रतिष्ठा बनाये रखने को इतना अपने वित्त के बाहर कर गुज़रे हैं कि भीतर ही भीतर काखते हुये कई वर्ष के लिये उनकी पोल न दूर होगी—ऐसाही हमारी कौम के सरगना अग्रसर या मुखिया-ओं के कपट पूर्ण कापटिक आचरणों में ढोल का पोल देख मन में यही आता है कि जो घर के ढहाने वाले चौपट चरन हैं वे किस भरोसे पर बाहर कौम के सुधार और संशोधक तथा रिफार्मर बनने का दावा

बांधते हैं किसी प्रमाणिक लेखक ने ऐसा ही कहा भी है Breakers of home cannot be the makers of nations. तात्पर्य यह कि जो अपने भीतरी चाल चलन में निपट मैले हैं जिनमें अनेक कुत्सित कर्म देख घिन पैदा होती है वे इन दिनों सभ्यता की नाक बने हुये देश के सुधार का बीड़ा उठाये हैं अवश्य ऐसों की करतूत सोपान के सहारे समाज उन्नति शैल के परमोन्नत शिखर पर चढ़ भारत सन्तानों को जगत् उजागर कर दिखावेगी और देश का वह कल्याण होगा जो किसी दूसरी तरह असम्भव था–घर में भूंजी भांग नहीं बाहर कागज़ का घोड़ा दौड़ाते लाखों का कारवार फैलाये हुये बड़े मातबर और प्रमाणिक सेठ जी या शाहजी जगत् भर का जगड्वाल अपने ऊपर ओढ़े मिती पर मिती बराबर खाते हुये ढुलके चले जा रहे हैं; दैव इच्छा से एक दिन पहिया रुक गई मुह बाय टाट उलट बैठ रहे हुण्डी वालों की नालिशें दगने लगीं माल असबाब कुर्क हो गया अदालत का खर्चा भी न तरा चाहते थे कि हुण्डी में का गया धन आधा ही मिले कुछ तो वसूल हो पर वहां क्या था जो लेते ढोल में पोल–पढ़ने वाले कहेंगे यह महा-खल है औरों की पोल ही खोलते इसका जन्म बीतता है अपनी ओर नहीं देखता ॥

"खलः सर्षप मात्राणि परच्छिद्राणि पश्यति ।
आत्मनो विल्वमात्राणि पश्यन्नपि नपश्यति" ॥

हां सच है पर यहां तो बिना ढोल ही सब ओर से निरी पोल है तब उसे क्या खोलें–बड़ा भारी कुनबा है लड़की लड़के नाती पोते बहू बेटियों से घर भरा है बाहर के लोग देखने वाले यही कह रहे हैं बुड्ढा बड़ा भाग्यवान है–जैसा ही बड़ा कुनबा वैसाही साहुत और एका कैसा है "बाहर लोगवा यों कहैं मियां जियैं अरु बरकतहै–मियां की गत मियैं जानैं सांस लेत जी सरकतहै–बुढ़ऊ भी ऊपर से बड़े भाग्यवान् प्रतिष्ठित और बड़े कुनवे वाले बन संसार में अपना मुह उजागर किये हैं पर भीतर की किच २ लड़ाई झगड़ों के कारन एकक्षण ऐसा नहीं जाता कि चिन्ता और फिकिर से छुटकारा पावें भोर से उठ आधीरात लौं

झौंझट छोड़ दूसरी बात नहीं; सूरदास की काली कामरी चढ़ै न दूजो रंग, बुढ़ऊ हज़ार चाहते हैं कि सब छोड़ कहीं एकान्त में बैठ कुछ परमार्थ साधन करैं सब २ चेष्टा करते हैं पर कभी इस किच २ से जान छूट सकती है=केवल इतना ही नहीं बड़भागियों में हमभी समझे जाते हैं इस नशे में चूर हैं, नाती हुये, पोते हुये, परोते हुये, सोने की सीढ़ी चढ़े, आज इसकी मंगनी है, कल उसका ब्याह है, परसों पोते का मूड़न है, लड़की के लड़का हुआ रोचना आया जन्ना साजना पड़ा, नतनी का ब्याह आलगा ननिहाली साजना पड़ा तात्पर्य यह कि सब ओर की झौंझट और नोच खसोट इस जीर्ण जरद्गव का पुरज़े पुरज़े किये डालता है सही पर यह मोहमयी प्रमाद मदिरा में उन्मत्त है-एक दिन लम्बी तान मुहबाय रह गये, घर की सब साहुत और एका रह गया, कुनबे के एक २ आदमी अलग २ डेढ़ चावल की खिचड़ी पकाते तीन तेरह हो गये ढोल में पोल देख पड़ने लगी; बुढ़ऊ की जो कुछ प्रतिष्ठा और भागवानी थी सब की पोल खुल गई-दफ़्तर में काम करते हैं लोग समझते हैं ये तो अमुक महकमे के हेड क्लर्क कुल स्याह सुफेद के मालिक हैं २०० या ३०० रुपये महीने में कमाते हैं इनकी बड़े आराम और चैन से कटती है-यहां बाबू साहब में जो ढोल में पोल है यह उनका जी ही जानता है-दफ़तर में १० से ४ तक कुड़लडूड़बरी में हैरान परेशान बात २ में सर दफ़तर साहब की झिड़की और फटकार की डर, घर में आय फिर वही पिसौनी एरियर ब्राटअप करते २ फुचड़ा निकला जाता हैं, पेनशन के दिन भी पूरे न होने पाये बीच ही में हरिः शरणं बोल गये, लोगों का देना निकला घोड़ा गाड़ी सब नीलाम हो गई ढोल में पोल निकल आई-सब लोग समझते हैं पण्डित जी बड़े विद्वान् महात्मा और सच्चरित्र हैं किसी तरह की झौंझट बिना उठाये घर बैठे गद्दी पुजाते हैं; यह कोई क्या जाने पण्डित जी महाशय के सच्चरित्र में निरी ढोल की पोल है, चेलियों की कटारसी भौं के कटीले कटाक्ष से बेदाग़ बचे रहना एक ओर रहा शिष्यसेवकों का ताव सह्मालना उनका मन अपनी मूठी में किये रहना क्या कम मुहिम है-हम लोग समझते हैं

हमारी प्रताप शालिनी न्याय शीला गवर्नमेंट के न्याय युक्त शासन में शेर बकरी एक घाट पानी पीते हैं प्रजा मात्र के जान माल की भरपूर रक्षा है किसी को किसी पर किसी तरह की ज़ोर जुल्म के कोई शिकायत नहीं है और वास्तव में ऐसा ही है भी; किन्तु पुलिस का महकमा गवर्नमेंट ने एक ऐसा कायम कर रक्खा है कि जिस्से सब न्याय और इन्साफ की पोल खुलते देर नहीं होती जिस्के संशोधन को बड़े २ कर्मचारी सब २ फिकिर कर रहे हैं पुलिस कमिशन जुदा ही इस्के संशोधन में प्रवृत्त है पर कोई कला नहीं लहती; एक छोटा सा कानस्टेबिल भी चाहे तो इनसाफ की ढोल में पोल निकाल देने को भरपूर काफी है–हम समझते थे एडिटरी का काम बड़ी स्वच्छन्दता का है इस्में कहीं से किसी तरह की पोल नहीं है समय से पत्र निकाल चुप हो बैठ रहे "न ऊधो के देने न माधो के लेने" पर तले तक डूब के जो देखा तो जैसा इस्में ढोल में पोल है वैसा किसी दूसरे काम में नहीं–टटके से टटके खयाल दिमाग से निकाल चुटीले से चुटीला लेख लिखो कि पढ़ने वाले रीझ तुर्त पत्र का मूल्य भेजदें पत्र पहुंचा पढ़ कर प्रसन्न भी हुये किन्तु मूल्य के तकाज़े का कार्ड रद्दियों में फेंक तीन कोने का मुह बनाय बैठ रहे–इत्यादि विचार कर देखो तो इस मायामयी ममता के मोहजाल में फसाने वाली इश्वरीय रचना का अद्भुत स्वरूप है जिस्का कोई ऐसा अंग नहीं है जिस्में कहीं पर कुछ न कुछ पोल नहीं है फिर भी वह मायामयी रचना मृग तृष्णा का पथिक बनाये हम सबों को अपने जाल में फसाये हुये है–सच है–

"ईदृशी राम मायेयं या स्वनाशेन हर्षदा।
नलच्यते स्वभावोऽस्याः प्रेक्ष्यमाणैव नश्यति"॥

और सच तो यों है कि इस जाल से वे ही निकल सक्ते हैं जिसे वही अपनी दया दृष्टि के द्वारा बाहर खींच अपना कर ले नहीं तो संसार महोदधि में गोते खाते पड़े रहो–

सौ अजान एक सुजान।

ईश्वर की विषम रचना का एक अद्भुत ढंग है कि उस्में सब का एक ही ढंग नहीं होता कोई बड़े विद्वान् हैं स्वभाव ही से कुशाग्र बुद्धि पैनी अकिल के–कोई ऐसे महा मूर्ख पैदाइश ही से कुन्द ज़िहन कि उनके मस्तिष्क में कितना ही चेष्टा करो कोई बात धसती ही नहीं–कोई ऐसे भी हैं कि भलाई की ओर, उन्हे हरचन्द हांक के ले जाओ पर उनका मन उनके मलिन संस्कार के कारण उस ओर जमता ही नहीं बुराई दुष्कर्म नीचे काम की ओर बिना किसी की प्रेरणा के वे आप से आप झुक जाते हैं–बुद्धिमानों ने समाज के बड़े गुण और बहुत फाइदे निश्चय किये हैं और समाज में भले बुरे सब तरह के लोग होते हैं किन्तु जो जैसी तबियत के होते हैं वे अपने लिये उस ढंग के लोगों को चुन उनमें जा मिलते हैं "पानी में पानी मिलै मिलै कीच में कीच" रहा यह कि जिस समाज में भलों का नम्बर अधिक होता है वह भली समाज समझी जाती है जिस्में बुरी प्रवृत्ति के लोग अधिक होते हैं वह गिरी या बिगड़ी समाज कही जायगी–बहुत पहले सृष्टि के आदि में सब लोग भले ही भले थे अधर्म अन्याय या पाप की बुनियाद का कहीं लेश भी न था; सब लोगों के सत् विचार सत् आचरण और प्रवृत्ति भी सत् थी वही सतयुग कहलाया; जो समय अब हम से यहां तक दूर हो गया कि अब इस समय पाप की घनिष्ट संकीर्णता में जब हमारी साधारण बुद्धि काम नहीं देती तब उन्ही भले लोगों के सद्विचार को जो ऋषि और मुनि तथा सन्त और साधु के नाम से विदित हैं खोजते हैं और उसका पर्यालोचन कर तब आगे चलते हैं–अब से और तब से अन्तर यह हो गया है कि तब असद्विचार असत्कर्म का लेश भी न था अब इस समय कुल टोटल असद्विचार और असत्कर्म ही का है कहीं कोई दो एक उस समय के "रिमेन्डर" बचे बचाये कोने अंतरे में पड़े जुगनू से जुग जुगा रहे हैं उन्ही को हम एक सुजान की उपाधि देते हैं जिनकी विमल बुद्धि समाज के सैकड़ों अजानों को राह बतलाती हुई सत्यानाश होने से बहुधा बचालेती है–कभी को ऐसा भी होता है कि

सुजानों के सद्विचार पड़े रह जाते हैं अजान भेंड़िया धसान में आय गार में जा गिरते हैं और नष्ट हो जाते हैं—तात्पर्य यह कि यद्यपि यह रचना विषम है पर इसकी समष्टि की समता केवल सुजानों ही पर निर्भर है और सर्वज्ञ परमात्मा केवल उन्हीं सुजानों ही के सत्कर्म से अजानों को विपत्ति से बचाये रहता है—सौ में एक भी ऐसे होंगे तो उन ९९ की रक्षा केवल उसी एक के कर्त्तव्य से होती है इसलिये हम सबों को उचित मालूम होता है कि सुजानो की पदवी का अनुसरण करते रहें और अजान हों तो सुजान बनने की चेष्टा में भरसक प्रवृत्त रहें इति—

काल चक्र का चक्कर।

सच है "अपना चेता होत नहिं प्रभु चेता तत्काल"—

"अहन्यहनि भूतानि गच्छन्ति यममन्दिरम्।
शेषा जीवितुमिच्छन्ति किमाश्चर्यमतः परम्" ॥

बराबर देख रहे हैं आज यह गये कल उनकी बारी आई परसों उन्हे चिता पर सोला आये पर जो बचे हुये हैं उन्हों ने यही मन में ठान रक्खा है कि हम अजर अमर और अबिनाशी हैं सदा स्थायी रहेंगे—यह तो कभी उनके कलुषित चंचल चित्त में धंसता ही नहीं कि एक दिन आवेगा कि हम भी शव रूप में ऐसा ही चिता पर सोलाये जांयगे—न जानिये हज़ार लाख या करोड़ वर्ष की नेह गाड़े हुये निश्चिन्त बैठे हैं—निस्सन्देह इस्से बढ़ कर अचरज की बात और क्या होगी? हमारे मन में आता है कि ऐसों ही के लिये कई वर्ष से प्लेग मनुष्य के जीवन को पानी का बुल्ला सा करता मानो चितावनी दे रहा है पर काहे को कोई चेतै और क्यों चेतै—किसी बात की कमी नहीं रुपयों से खचाखच खज़ाना भरा है २४ घंटे के दिन रात में ३६ भांत की उमंग और हौसिले मन में उठते रहते हैं—सच है—

"दिनमपि रजनी सायं प्रातः शिशिर बसन्तौ पुनरायातः।
कालः क्रीड़ति गच्छत्यायुस्तदपि नमुंचत्याशावायुः" ॥

चार भाइयों के बीच में एक लड़का है बाप मा चाचा ताऊ बाबा नाना बड़े लोग सब दिन रात मुह जोहते रहते हैं और अपने प्रिय पुत्र की सोहावनी सूरत पर बार २ पानी पी रहे हैं अंगुलियों दिन गिनते बीतता है कि कब वह समय आवे कि हम अपने ललन का ब्याह करैं बहू घर में आवे चन्द्रसेनीहार मुह दिखाई में भेंटकर उस का चांद सा मुखड़ा देख अपना जी जुड़ावें—हमारे सब मनोरथ सफल हों बड़ी से बड़ी महफिल साज सात भांत की मिठाई परसैं चार भाई बिरादरी का जूठन पड़ै हमारा घर पवित्र हो—बर्षों के पहिले से नगर की प्रसिद्ध बारबनिताओं को बयाना दे दिया गया ब्याह की तैयारियां हो रहीं थी कि अचानक ललन को ज्वर आया दवा दारू झार फूंक टोना टनमन में सैकड़ों रुपये फूक डाला ज़रा भी फुरसत न हुई गिलठी प्रगट हो आई दोही तीन दिन में ललन जी जहां के थे वहीं चल बसे—बड़ी से बड़ी डिगरी हासिल किये हुये हैं; छात्र मण्डली में जिनकी कुशाग्र बुद्धि की शोहरत है; बड़ी २ उमंगें मन में भरी हुई हैं कि कंपीटीशन में हम बिलाइत वालों को अपने नीचे करैंगे; मातृ भूमि के लिये हम ऐसी कोई बात कर गुजरैं जिसमें भारत के सत्पुत्र कहलावें; आहार बिहार की गड़बड़ी से एक दिन दो चार दस्त और कै हुई दोस्तों ने समझा अजीर्ण है दौड़ धूप करने लगे इधर इनका हाल बिगड़ता ही गया १२ घंटे के भीतर ही समाप्त हो गये—यह किसी ने न समझा कि अन्तक देव ने एक बड़ा भारी कालेज खोल रक्खा है सर्व विद्या पारंगत इन को वहां का प्रोफेसर किया चाहते हैं—यह न्याय है या अन्याय इस का बिचार कभी मन में न आया; अधम से अधम काम करने में कभी हिचक न हुई; कई लाख और करोड़ की माया जोड़ने में बराबर महा अर्थ पिशाच रहे आये; फिर भी दिन रात सोचा करते हैं ५० हज़ार फलाने आसामी से बाकी है एक लाख अमुक सेठ के नीचे दबा है और वह टाट उलटने पर है—२५ हज़ार ब्याज का चिग्गुरूमल गोधन दास से अब तक न बसूल हुआ—ऐसीही ऐसी चिन्ता में व्यग्र एक रात को नीद न आई अधिक शीत के कारण फालिज आ टूटा ज़बान बन्द हो गई मुह टेढ़ा पड़ गया सुबह होते २ चल बसे साथ अपने एक पाई भी न ले

गये-एक २ पैसे के लिये ज़ेर बार हैं रोज़ का भोजन बड़ी कठिनाई से चलता है दैव संयोग से एक ऐसा भाग्यवान् कुल उजागर जन्मा कि उस ने कुल की प्रतिष्ठा चौगुनी कर दिया; मिट्टी छूते सोना होने लगा; बरसाती नदी की बाढ़ के समान धन सम्पत्ति सब ओर से आ इकट्ठी होने लगी; दौलत की बाढ़ के साथ हैासिले और उमंग भी बढ़ने लगे; संगीन पक्का मकान छेड़ दिया गया; जड़ाऊ ठोस गहने पिटने लगे; ज़मीदारी की भी खरीद होने लगी; बात२ में नफ़ासत और वज़ेदारी की तराश खराश पञ्चे दर्जे तक पहुंची-अकस्मात् वह पुरुष रत्न जिसकी बदौलत यह सब कुछ था चल बसा सूर्यास्त होने पर अन्धकार सा छा गया जिनके मिज़ाज कुतुब मीनार की ऊंचाई तक चढ़ गये थे अब कौड़ी के तीन २ हो गये-इस तरह इस काल चक्र की अद्भुत महिमा झूरी भरे भरी ढरकावे की भांत कुछ समझ में नहीं आती-अब दूसरी ओर देखिये कुछ अकिल नहीं काम करती क्यों इस काल चक्र का चक्कर ऐसा टेढ़ा मेढ़ा है-युगव्यवस्था के सम्बन्ध में पुराण वालों की पुरानी अकिल चाहो जो मान बैठी हो हमें तो कुछ ऐसाही जचता है कि वह युगव्यवस्था भी इसी काल चक्र की विकराल गति है-जहां और जब इस चक्र का चक्कर अपने अनुकूल है तहां और तब सतयुग है उसका प्रतिकूल होना ही कलियुग है-भारत पर वह चक्कर नितान्त प्रतिकूल है इसलिये यहां घोर कलियुग वर्ते रहा है; विलायत पर अनुकूल है वहां शुद्ध सत्ययुग राज करता है; वहां वालों में जो बुराइयां हैं वे भी भलाई में शामिल कर ली गई हैं-उसी कालचक्र की प्रतिकूलता से हमारे में बची खुची जो दो एक भलाई थी वह भी बुराई और पाप समझ ली गई-काल चक्र की अनुकूलता तथा प्रतिकूलता का इस्से बढ़ कर दूसरा उदाहरण और क्या होगा कि आदि में जो यहां सौदागरी करने के बहाने आये वे अब समस्त भारत के काश्मीर से कन्याकुमारी तक अखण्ड एक चक्रा पृथ्वी के राज्य के अधिकारी हो गये-वही यहां वाले जिनको अनादिकाल से यहां की भूमि से मातृवात्सल्य रहा और जिन के नस२ में यहां के जल वायु का असर चुभा हुआ है वे काल चक्र की प्रतिकूलता से निकाल बाहर कर दिये गये; बैठे २ ललचाते और

मुह ताकते रह जाते हैं; जो कुछ सार पदार्थ और रस हैं उसका आनन्द एक तीसरा भोग रहा है ये खूदड़ और उच्छिष्ट ही से अपना पेट पाल लेने को परम सौभाग्य मान रहे थे सो उस में भी उस चक्र की बक्र कुटिल गति ने ऐसा खलल डाल रक्खा है कि चिरकाल से दुर्भिक्ष और अवर्षण इन्हे निश्चिन्त नहीं रहने देता–इस समय कई और उपद्रवों से कुछ स्वास्थ्य था तो प्लेग अपनी बहादुरी प्रगट कर रहा है इस्से किसी तरह गला छूटैगा तो कोई दूसरी बला आ घेरैगी–बड़े २ दार्शनिक वैज्ञानिक योगी तथा भविष्य के जानने वाले किसी ने इसका भेद न पाया कि क्यों ऐसा होता है–कोई कहते हैं यह ईश्वर की इच्छा है; दूसरे मानते हैं नहीं २ संस्कार या पूर्व संचित्त का यह परिणाम है "जो जस कीन सो तस फल चाखा"; और लोग सिद्ध करते हैं यह सितारों की गरदिश है–संशोधक और रिफार्मर जुदाही तान भर रहे हैं कि हम अपने यहां प्रचलित कुरीतों को उठाय समाज का संशोधन क्यों न कर डालें जिसमें हमारे में कौमियत और एकता आवे मुलकी जोश पैदा हो काल चक्र की जो बक्र गति है ऋजु गति हो जाय—कोई कहते हैं यह बाल बिधवाओं की आह है; दूसरे कहते हैं यह बाल्य विबाह का सब दोष है इत्यादि २–हमारे धूर्त शिरोमणि इसी पर ज़ोर दे रहे हैं कि ब्राह्मणों का मान ओर हिन्दू धर्म पर विश्वास उठता जाता है उसी का यह सब फल है; कोई २ दबी ज़बान हिम्मत बांध कही तो डालते हैं यह सब राजा के पाप या पुण्य का परिणाम है; जो हो बास्तव में यह क्या गोरखधन्धा है कुछ नहीं खुलता—सच पूछो तो आदमी की शैतानी अकिल एक हारी है तो इसी बात में कि वह कुछ हल नहीं कर सकती कि आज क्या है कल क्या होगा और इसी को इस संसार इंजिन का बड़ा इंजीनियर अपने हाथ में रक्खे हुये है—यह इस काल चक्र के चक्करही का प्रभाव है कि रोम इन्द्रप्रस्थ अयोध्या पाटलिपुत्र कनौज आदि बड़ी २ राजधानियां जो किसी समय आदमियों का जंगल थीं जिनकी लम्बाई चौड़ाई योजन और कोसों के हिसाब से थी और जहां की मनुष्य संख्या ४० लाख २० लाख १० लाख की गिनती

की थीं वह इस समय बहुधा तो उजाड़ घुग्घुओं के घोंसलों के लिये उपयुक्त हैं कोई २ नाम मात्र को अब तक विद्यमान हैं—लन्दन पेरिस कलकत्ता आदि जो एक समय बहुधा तो उजाड़ जंगल तथा जलमग्न अनूप थे वहां अब आकाश से बात करते हुये गगन स्पृक् प्रासाद स्वर्ण मण्डित मन्दिर खड़े हुये हैं; जहां चंचला लक्ष्मी अपनी चंचलता से मुह मोड़ चिरस्थायिनी हो समुद्र की तरंग सी हिलकोरैं मार रहीं हैं—इत्यादि इस काल चक्र की महिमा का पार कौन पा सकता है तब हमारी क्षुद्र लेखनी किस बूते पर इस चक्कर में पड़ने का अधिक साहस करे पढ़ने वालों के चित्त बिनोदार्थ इतनाही सही—

टोपी वर्सस साफा।

पाठक बहुत दिनों से इन दोनों ने ऐसा झगड़ा मचा रक्खा है कि मेरा सिर इन दोनों की चखचख से खाली हो गया—जब देखो तब अपना २ दुख रोना कहने को मेरे आगे आ बैठते हैं—वह अपनी बड़ाई करती है यह अपनी ऐंठ में आय "अपनेही मुह मियां मिट्ठू" बनता है—इन दोनों का बादद बिबाद सुन कर घबड़ा उठता हूं मैं इस झगड़े को आप के सामने ज्यों का त्यों कहे देता हूं आप कृपा कर पंचाइत से इन का न्याय कर दीजिये—

साफा—क्योंरी टोपी तू मेरे आगे कल की लुकड़िया है कोई तुझे जानता तक न था तेरा जन्म भी तब न था जब से मैंने इस दुनिया में प्रतिष्ठा पा रक्खी है अब तू मेरी बराबरी करती है "छोटा मुह बड़ी बात"—

टोपी—जी हां ठीक है वह समय गया जब खलील खां फाख्ते उड़ाते थे" अब तो न वह ज़माना ही रहा न वे आदमी न वे फेशन—तब आप क्यों मेरे ऊपर नाक भौं चढ़ाया करते हैं मैं आप से किस बात में कम हूं सोतो ज़रा सोचिये—

साफा—हां तू मुझे रास्ता बताती है देख बड़ों के मुह लगना अच्छी बात नहीं है—

टोपी—जी हां इतना मुझे भी ज्ञान है मैं कोरी लंठही नहीं हूं—आप को अपने बड़प्पन का घमण्ड है तो मुझे भी अपनी बुद्धिमानी का

अभिमान है जैसे के साथ वैसाही सही—मैं इस पृथ्वी पर कई स्वरूप से रहती हूं अर्थात् मुसलमानों के साथ तुरकी तरीके से; पण्डितों के के समाज में निराले ढंग से; पढ़े लिखों की सोहबत में कुछ औरही फेशन से; टुच्चों के साथ उन्हीं के मरज़ी के मुआफिक सिकुड़ी बटुरी रहती हूं—यहां तक कि मैं जिस शहर में जैसे चाहूं वैसे रह सकती हूं अर्थात् लखनऊ, बनारस, मुरादाबाद, अलीगढ़ आदि शहरों में मेरे दूसरेही ढंग हैं—यदि आप अपनी न्याय की निगाह से देखैं तो मैं आज कल की सभ्यता का एक बड़ा बोझ सम्हाले हुये हूं—

अब तो साफे साहब उलझन में पड़ गये अकिल ठिकाने हो गई पर तो भी सुलझे नहीं और बोले—

साफा—सुन पहले मेरी बात सुन—इस संसारमें मेरी कैसी प्रतिष्ठा है यह मैंही हूं जो बहादुरी को अपने वश में किये हूं—तलवार बांधना रण भूमि में जूझना मेराही काम है—यह मैंही हूं जो तमाम दुनिया में सिक्ख लोगों का नाम फैलाये हुये हूं—यह मैंही हूं जो तमाम मुल्की कामों में मदद देता हूं—कचहरी दरबार में बे धड़क घुसा चला जाता हूं; यह मेरीही लाल आखों का रोब है जो एक ज़रा सा पुलिस का सिपाही इतना इखतियार रखता है; यह मेरीही लपेट झपेट है जो सर्कार की कौड़ी २ माल गुज़ारी और टेढ़े मेढ़े टैक्स वसूल करा देती है बड़े २ भत्ते खां का मांझा ढीला कर देती है और अन्त में अपनी चाप चढ़ाय देती है; मुमकिन नहीं कि जिस के पास रहूं उसकी लोग प्रतिष्ठा न करैं—मैं गंभीरता और सुन्दरता तो उस मनुष्य को पहलेही से दे देता हूं जो मुझे अंगीकार करे—

यहां तक तो टोपी चुप बैठी थी परन्तु अब उससे बिना बोले न रहा गया और बोली—

टोपी—क्यों साहब जब यही बात है कि अपनी बड़ाई अपने मुह की जाय तो ज़रा कान दे के सुनिये कि मैं इस दुनिया में क्या वस्तु हूं—आप तो अपनी सी बहुत गा चुके देखिये मेरे मुकाबिले आप इस पृथ्वी का बहुतही ज़रा सा हिस्सा रोके हुये हैं—यह मैंही हूं जो विचित्र २ छटा से इङ्गलैण्ड, फ्राँस, जरमनी, रशिया, प्रसिया, टरकी

इटली आदि बड़े २ मुलकों में और कौमों में प्रतिष्ठा पाती हूं-बताइये इन गिनाये हुये देशों में आप को कोई कभी स्वप्न में भी ध्यान में लाते हैं ? यह मैं ही हूं जो बड़े २ विद्वान् अद्वितीय दार्शनिक भारी २ शास्त्रज्ञ नामी २ वैज्ञानिक Scientists और लम्बे चौड़े खां बहादुरों की अक्ल अपने तलवे के नीचे दाबे रखती हूं-प्राचीन माननीय वेद पुराण मुकद्दस कुरान शरीफ M. A.—B. A.—L. L. D.—L. L. B.—आदि बड़ी २ डिगरियां और उपाधि सब मेरेही आधीन हैं-और अब मैं यह भी साबित कर सक्ती हूं कि आप मेरे ताबेदार हैं-

साफा-देख यही तेरी ज़ीट जी जलाकर खाक किये देती है-तू यह देख कि डील डौल में मुझ से कितनी छोटी है—

टोपी-(हंसकर) जी हां But you see greatness consists in wisdom and not in years मनु ने भी कहा है-

"न तेन वृद्धो भवति येनास्य पलितं शिरः।
यो वै युवाप्यधीयानस्तं देवा स्थविरं विदुः॥

"बुज़ुरगी व अकलस्त नवसाल"

साफा-अच्छा-अब तू यह देख कि कौन हम दोनों में मनुष्य का विशेष उपकार करता है-मैं किन २ मुसीबतों में मदद देता हूं और तू क्या सहायता करती है-जाड़े के दिनों में जो मुझ से लिपटता है अत्यन्त सुख पाता है ; कैसीही सरदी हो यदि मुझे अपने कलेजे और कान में लपेट ले तो तुरन्त जाड़ा नमस्कार कर जा दूर खड़ा हो ; गरमी के दिनों में ऐसा कुसमय आ पड़े जैसा बहुधा देखने में आता है कि कोई मनुष्य प्यास से पीड़ित हो जैसे तैसे कुआं मिले पर रस्सी डोल न हो तो मैं किसी न किसी तरह उसपर दया कर स्वयम् कुये में गिर उस की तृषा दूर कर सक्ता हूं-कोई कुये में गिर गया हो तुरन्त मैं उसका हाथ पकड़ने को तैयार हो जाता हूं-कहीं चोट लग गई हो लहू बहता हो तो यह मेराही काम है कि अपने को खण्डित कर उस

की सहायता करूं—तू अपने किसी रूप में हो सोला, फेल्ट, चौगोशिया, दोपल्ली, टरकी, भागवती, आदि किसी भेख में भी जन्म पर्यन्त ऐसा उपकार नहीं कर सक्ती—मैं गरीबों के साथ पूरा कुली का काम करता हूं अर्थात् उस बेचारे के आटा, दाल, नोन, तरकारी आदि सभी वस्तु की संभाल कर सकता हूं—तू निरी चिड़्डो अपने दो अंगुलों के डील से कौन काम करने लायक है—

टोपी (मुसकराकर) क्या खूब The greatest good of the greatest member आप का माटो मालूम होता है—यह बहुत अच्छा है किन्तु यह कुलीगीरी आप की बुजुरगी तथा शान के बाहर है—

साफा—बाहरी बद मिज़ाज मालूम देता है बद यखलाकी तेरी नस२ में भरी हुई है—सोचो भी तो क्या "Fellow feeling and help to the distitutes" तेरी दृष्टि में नेकी Virtues नहीं बल्कि बुराई Vices हैं—ठीक है यह तुम्हरा दोष नहीं है किसी कवि ने सच कहा है—

"Old orders changeth, yieldiug Place to new ;
Lest one good custom should currupt ihe world".

ऐसी २ खुराफात बातों से झूठा गाल बजाने वालों में इन दिनों की नई सभ्यता के Latest edition में तुम हो जो चाहो सो कहो तेरी सब माफ है—

टोपी—कृपानाथ आप क्रोध मत करें फिलासोफी को नाहक कष्ट न दीजिये मुझे माफ करो मैंने तो हंसी की आप उसे सत्य समझ गये—निस्सन्देह आप की अपेक्षा मुझ से कोई परोहकार नहीं बन पड़ता मैं शिक्षा लेती हूं आप को गुरु करती हूं और आज से सदा आप से दबती रहूंगी—

ब्र-मो-कूल

काल और उसका कार्य।

भ्रातः कष्ट महो महान्स नृपतिः सामान्त चक्रं च तत्।
पार्श्वे तस्य च सापि राज परिषित्ताश्चन्द्रीबिम्बाननाः॥
उद्रिक्तः सच राज पुत्र निवहस्ते बन्दिनस्ताः कथाः।
सर्वं यस्य वशादगात्स्मृतिपदं कालाय तस्मैनमः॥

भर्तृहरिः

अहह! भाई! बड़े दुख की बात है! देखो तो यहां पहिले कैसा परम धार्मिक नीतिज्ञ राजा राज करता था जिस को देख कर एक वार देव राज इन्द्र सरीखे नरपति भी सीस झुकाते थें; उस का राज्य कैसा अखंड धन धान्य परिपूर्ण तथा जगद्व्यापी था! उसके न्यायी तथा प्रभु भक्ति रत सभासदगणों का स्मरण कीजिये जो राजा के चहुं ओर घिरे हुए हित की बातें किया करते थे; उन चन्द्रमुखी युवतिगणों को क्या हुआ जिन के हाव भाव कटाक्ष पूरित मधुरगान से आजन्म का दुःख निःशेष हो जाता था; अब उन राज कुमारों की मण्डली कहां जो अपने अतुल राज वैभय के आगे किसी को कोई वस्तु ही नहीं समझती थी; वे बन्दिगण कहां गये जिन्हों ने राजा को सदा मीठी २ बातें सुनाय स्ववश कर रखा था और वे बात कहां जो उन दिनों सर्व साधारण में हुआ करती थीं–हाय! उन में से अब कुछ भी न रहा जिसने सब को अपने उदरस्थ करलिया जिसने उन सब हमारी आंखों की देखी बातों को अब कहानी में परिणत कर दिया है भाई उस काल को मेरा नमस्कार है॥

प्रिय वाचक वृन्द! इस संसार रूपी संग्राम भूमि में हार जीत के समान दो ही पदार्थ प्रत्यक्ष दिखाई देते हैं–पहिला जीवन दूसरा मरण। सुख का अन्तिम छोर जीवन और दुख का मरण है। जीवन यह जैसा श्रुति मधुर हो कर आनन्द पूर्वक प्रवृत्ति की पीयूष धारा चारो ओर से बरसाता है उसी प्रकार मरण वा मृत्यु कर्ण कटु हो निवृत्तिगर्भक निरानन्द

का कालकूट जबड़ा फाड़ २ कर पिलाती है । जीने की आशा से अनेक भाँति की मनोरथ रूपी बेल जिस प्रकार दिन दूनी रात चौगुनी लहलहाती बढ़ती जाती है उसी प्रकार मरण की प्रखर ज्वाला से वह जल कर कोयला होती है । जीने की आशा से यह प्राकृतिक तथा कृत्रिम जड़ जगत् जैसे परम सुख मय प्रतीत होता है मृत्यु की प्रखर ज्वाला से वह उतना ही दुःख मय तथा निस्सार दिखाई देता है । सारांश यह है कि जीने का जितना सुख नहीं होता उतना मरने का दुःख होता है । बड़े २ विज्ञानी अद्वैत वादी की आखों से मृत्यु के समय आंसू टपकते दिखाई दिये हैं उस समय उनके मुख से राम की जगह रोटी कहते सुना है । कारण इसका यह है कि जीवन का कोई नियम वा सीमा नहीं है और मरण हाथों हाथ उपस्थित है । जीवन सब को प्यारा है उस के सुख साधनों पर विचार करने से जिस प्रकार एक काल्पनिक सुख का संसार सामने खड़ा हो जाता है, उसी प्रकार मृत्यु के त्रास से वह निरा शून्य अंधतामिस्र एवं भयावना दीखता है, दुःख तथा वैराग्य प्रत्यक्ष हो आगे नाचने लगता है और कान के पास यह सुनाता है :"कालो जगद् भक्षकः" अर्थात् यह तुम्हारा सुख सब स्वप्नवत् चार रोज़ का है– "चार दिन की चांदनी फिर अंधियारा पाख" तब क्या कहना गांठ गांठ से दुख शोक की शाखाएं फूटने लगती हैं, हृदय कांपने लगता है, हाय मारते शरीर टूटता है; सिर कर पल्लव पर आ टिकता है; मुख मंडल निस्तेज और फीका पड़ जाता है इत्यादि । यदि कोई कहे कि प्राणी अज्ञान बश हो कर काल से डर खाता है, सो नहीं, उसे इसका डर स्वाभाविक है और इस बात का साक्षी उसका मन ही है ॥

जन्म और मरण दोनों परस्पर विरोधी हैं–विरोधी से विरोधी का जन्म होता है–जन्म से मृत्यु और मृत्यु के अनन्तर जन्म अवश्यम्भावी है और काल जन्म जन्मान्तर में संसृति चक्र के सदैव साथ रहता है; इससे सिद्ध है कि काल नित्य तथा अनादि है–जो अविनश्वर तथा एक रस है वह बलवान् भी होता है–सिवाय इसके यह सूक्ष्म तथा आकार विरहित है–विचारने का स्थान है कि जो पदार्थ जितना सूक्ष्म होता है उस में उसी प्रकार की विलक्षण शक्ति निहित

रहती है—देखिये तलवार की धार केश से सूक्ष्म होती है पर उस में वह बल स्थायी रहता जो अपने कई गुने मोटे तथा मज़बूत वृक्ष को काट डालती है—मकड़ी के सूत को देखिये कितना सूक्ष्म होता है अथवा यों कहिये कि आंखों से देखा भी नहीं जाता पर वह वह काम करता है जो एक विक्रमशाली योद्धा से होना कठिन ही नहीं वरन असंभव है; अर्थात् मक्खी आदि क्षुद्र पखेरुओं और कीड़ों को अनायस फंसा लेता है। इसी प्रकार नैयायिकों के ९ द्रव्य काल, ज्ञान, दिशा, आदि सबों को विलक्षण शक्ति सम्पन्न समझना चाहिये—इस काल के बलवत्ता का यह भी कारण है कि वह एकदेशीय नहीं वरन सर्व देशी अर्थात् व्यापक है—पुराणों में इस को साकार मान कर बड़े भयानक रूप का देवता वर्णन किया है—पुराण में ही क्या उपनिषदों में भी इसके साकारत्व का पता लगता है—कठवल्ली में नाचिकेत का साक्षात् यमराज के साथ प्रश्नोत्तरी बात चीत है पर यथार्थ में यह केवल अबोधोपहत शिशु सम समाज के समझाने के निमित्त ही कल्पित है और इसो वक्रबोध Indirect comprehension के आधार पर ही पुराण मत की सृष्टि है—यदि काल स्वरूपवान् है तो वह उतना बलावन् या भयानक नहीं हो सकेगा जितना सूक्ष्म रूप से व्याप्त रहने पर है—और भी जिसका रहस्य जिसको अज्ञात है वही उसके लिये काल है—मनुष्य जाति जड़ जगत् पशु पक्षी आदि दूसरी जीव जगत् का भेद जानती है और ये उसका नहीं जानते इसी कारण इनको मनुष्य जाति काल के समान दिखाई देती है और जिन का हाल मनुष्य नहीं जानता कि किस समय क्या करेंगे उस दशा में मनुष्यों के लिये वेही काल से दिखाई पड़ते हैं—इस रीति से बड़े छोटे के लिये काल हैं थल जल नभ चारी सब प्रकार के जीवों में इसी प्रकार काल का भय बना हुआ है—कोई निश्चय नहीं कर सका कि काल का वास्तविक रूप कौन सा है—वह अनेक रूप से जीव जड़ और चेतन सब पर अधिकार रखता है इससे चाहे कोई उसे स्वरूपवान् कहे चाहे बिना रूप का पर वास्तव में इसका प्रकृत रूप तब तक नहीं मालूम हो सका जब तक कोई उसके अलौकिक कार्यों पर विचार न करे॥

काल का कोइ भेद या प्रकार नही है वह एक है पर समझने वाले वा देखने वाले उसे अनेक आंख से देखते हैं-कोई कहता है अ-ज्ञान रूप है, कोई श्वास रूप बतलाता है, किसी का कहना है कि वह व्याधिरूप है, कोई यह रूप बतलाते हैं-परन्तु यह किस रूप से किस समय जीवों पर आक्रमण करता है कोई नहीं समझ सकता-संसार में जितने उपाय आप्त पुरुषों ने कहे हैं वे सब काल से बचने और सुख पूर्वक सदा जीते रहने के हैं-व्यास पतंजलि, कपिल, कणाद, बराह मिहिर, धन्वन्तरि, चरक, सुश्रुत, वाग्भट्टादि सब के कथन का मूल उद्देश्य है कि येन केन प्रकारेण हम जीवों की उस महा बधिक काल के दुस्तर जाल से मुक्ति हो—परशोक है कि उन उपायों से दूसरों को लाभ होना तो दूर रहे स्वयम् आचार्यगण ही विफल मनोरथ रहे-काल का भेद न पाया, आपड़ने पर सब भूल गया, अमरत्व की सिद्धि उसी अदृष्ट के गोद में रही और आप अपने को काल के समर्पण कर स्वर्ग को सिधार गये-इससे बचना असाध्य देख कर तब कहा गया है "काये कृतान्ताद्भयं" अर्थात् जिसने शरीर धारण किया वह एक दिन अवश्य मरेगा, जो इस शरीर को बहुत चाहता है संवारता है और अनेक प्रकार के सुखद उपादानों से चिकना रखता है उस को इस से हाथ धोना पड़ेगा-उस के साथ सम्पूर्ण ऐहिक भोग विलास बुल बुले से बिला जावेंगे "चोपदार चाकर चमूपति चंवर दार मन्दिर मतंग ए तमाशे चार दिन के हैं"-इस पर अर्थात् काल पर किसी का वश नहीं चलता-

काल कुछ चलता फिरता नही पर ईश्वरीय आकर्षण शक्ति के बल से चन्द्र सूर्य पृथ्वी आदि स्वर्गीय पिण्डों के सतत गतिमान् होने से "नौकारूढ़ चलत जग जाना" के समय यह भी चलता सा जान पड़ता है और ऐसा मान करके ही इसे कालचक्र की संज्ञा दी जाती है—चन्द्र सूर्य इस के प्रत्यक्ष चक्र हैं-काल चक्र कहने का अभिप्राय यह है कि जैसे "चाकी के मुह परयो सो मैदा होय है" इसी प्रकार इसमें आने से स्थावर तथा जंगम जगत् सब पिस कर परिमाणु रूप बन जाता है कोई ज्यों का त्यों नहीं रहता-अभिमान सब वृथा है कि हम सदा

ऐसेही रहेंगे "लघु जीवन संबत पंच दसा-दल्पान्त न नाश गुमान असा"-हम को यह बात सदैव स्मरण रहनी चाहिये कि "जम के हाथ गुलेलफटक्का पार है"—यह व्यर्थ का ममत्व हम को और मृत्यु के मुह में ठूंसता—जब कोई साधारण ज्वर आता है या देश तथा नगर में कोई संक्रामक रोग फैला होता है तब रोगी से पहिले अपनेही को यह शंका होती है कि कहीं मैं मर न जाऊं-इस अनागत भय से मुक्त होने को वह अनेकानेक उपाय भी चुपचाप करता है-उसका मानसिक भय एक या दो बार किसी प्रकार मिट भी जाय पर वह चिरकाल के लिये दूर नहीं होता-यह हम लोगों की बड़ी भारी मूर्खता है कि काल के नाम मात्र से ही भय खावें—इस से यही होता है कि दृश्य कलेवर तो नष्ट होही जाता है पर उस के साथ अनवरत भ्रमाच्छन्न रहने से इस आत्मा से उसका यशःकाय भी नहीं बन सकता जिसके रहने से ही वह पुरुष जीवित कहलावेगा बरन सब मिट्टी में मिल जाता है—पश्चिमीय देश के निवासी इस काल के कर्म गुण स्वभाव को अच्छी तरह जानते हैं इसी कारण वे मृत्यु से नहीं डरते वरन उत्तरोत्तर अभ्युदय की सिद्धि करते जाते हैं—अभ्युदय से सत्कीर्ति और उस से निश्रेयस तक का फल प्राप्त होता है क्योंकि "नास्ति येयां यशः काये जरा मरणजं भयम्" अर्थात् इस नश्वर स्थूल शरीर से सूक्ष्म यश का शरीर ही अविनाशी है इसलिये स्वधर्मारूढ़ हो सत् यश की ही प्राप्ति करनी सर्व सम्मत है-

प्रिय पाठक! ऊपर जो कुछ लिखा गया है उस पर विचार पूर्वक मनन करने से प्रगट होगा कि काल क्या है और वह क्या कर रहा है—चौदह लोक आप घूम आइये आप को इस के समान पेटू कहीं नहीं मिलेगा—यह जैसा खाऊ है वैसाही यह बलवान् भी है इसके प्रमाण हम ऊपर लिख चुके हैं—खाऊ तो यह ऐसा है कि संसार में इस बात को एक कहावत ही चल पड़ी है"काल काहि नहि खाय" यदि खाय में काकु माना जाय तो यही कहा जावेगा कि संसार में ऐसी कोई चीज़ ही नहीं जो इस से बची हो अर्थात् यह सभी को खा जाता है किसी को नहीं छोड़ता—विचार कीजिये "केते अर्जुन भीम जरा जसवंत से-

केते गिने असंक बली हनुमंत से-जिन की सुन सुन हांक महागिरि काटते—पर हां वाजीदा, तिन घर खायो काल जो इन्द्रहिं डाटते" आदि सृष्टि से अबतक ऐसे २ धुरन्धर अनेक इसके उदरदरी में समा गये और समाते जाते हैं तौभी आश्चर्य है कि तृप्ति अबतक इसे न आई न कभी आनेकी संभावना है—"तृप्तिर्नास्ति महोदरस्य बहुभिर्ग्रासैः पलासैरपि" मानो वह चीखा पाकर और भी भूखा हो गया है और दूनी तेज़ी से रात दिन मुंह बाये चारो ओर धावमान हो रहा है आकाश पाताल एक कर रहा है—नाम सुनतेही प्राणी भागते हैं जिस प्रकार शस्त्र धारी शिकारी व्याधा को देख जंगली पशुओं की भीड़ प्राण छोड़ कर भागती है वा यों कहिये कि जैसे तरुण मृग-राज को देखकर मृगवृन्द छू हो जाते हैं—चाहे यह शिकारी अपनी शिकार को न देखे और वह शिकार बच जाय पर काल ऐसा अचूक अहेरी है जो अपना पराभव कभी जानताही नहीं—न तो वह कभी चूकता है न उसका शिकार कभी बंचने पाता है—"सुरक्षितं दैव हतं बिनश्यति………कृत प्रयत्नोऽपि गृहेन जीवति" सब एक के पीछे एक उस का ग्रास होते जाते हैं "कोई आज चले कोई काल चले कोइ बचने नहीं पाता" प्राणी जब से मा के पेट से भूमिष्ठ होता है तभी से उस महापराधी काल महाराजा का रक्त शोषक शर शरीर पर बिद्ध होने लगता है—लव निमेष वा पल विपल सेकेंड मिनट से लेकर आकल्प एही मानो इस के बाण हैं "लव निमेष परिमाण युग वर्ष कल्प शर-चंड" जिस के लगतेही शरीर के आकार व चेष्टा प्रतिक्षण बदलती जाती है—हम तो स्थूल दृष्टि से यही समझते हैं कि यह बालक बढ़ता जाता है पर नहीं यह हमारी भूल है—जैसे विष के खाने से पल पल में शरीर का रङ्ग बदलता जाता है और अन्त को मृत्यु धर दाबती है उसी प्रकार काल शर के प्रभाव से शरीर की शैशव पौगंड किशोर युवा आदि भिन्न २ अवस्था होती हुई अन्त को प्राणी काल कवलित हो जाता है—इस भूपृष्ट में ऐसा कोई जीवधारी नहीं जो काल सर्प के डंक से क्षीण काय व क्षीणपद न हुआ हो—ऐसा कौन है जो मृत्यु के भय से एक बार थर्राता न हो—ऐसा कौन सखी का लाल हुआ जो कालदेवता का बलि न बना हो—इस के लिये न सतयुग लगता

है न कलियुग, न स्वर्ग लोक, लगता है न मर्त्य लोक—देवता लोग भी "क्षीणेपुण्ये मर्त्यलोकं विशन्ति" इस लोक का तो कुछ ठिकाना ही नहीं, नामही इसका मृत्यु लोक है—नगर २ गांव २ में महादिग्विजयी काल का कम्प गड़ा हुआ है—जहां इस के सेवक गण निर्भयचित्त हो कोटानुकोट जीवों की टांग पकड़ २ यमराज के मुखविबर में फेंक रहे हैं—कोई ऐसाही भाग्यवान् पुण्य का पुतला होगा जो पूरी उमर काटता होगा—"हांथ कंगन को आरसी क्या? प्रत्यक्ष देखिये, कहीं प्लेग तो कहीं हैज़ा, कहीं कहीं शीतला; कहीं भयंकर अकाल से तत्क्षण करोड़ों काल के ऊपहार बन रहे हैं तो कहीं सुकाल से ज्वर खांसी क्षय आदि अनेक रोग विविध प्रकार के रोचक मसालों से मन्दाग्नि द्वारा पक्वान्न प्रस्तुत कर रहे हैं—कहीं बाल विधवाएं एकान्त में मोती से आंसू टपका रही है तो कहीं वृद्ध माता पिता गहरी सांस ले ले "हा पुत्र हा पुत्री" कहते काल को बुला रहे हैं—कहीं अनाथ बालक बालिकाएं एक मुट्ठी चने के लिये दूसरों का मुह जोह रही हैं—कोई स्त्री के लिये रो रहा है तो कोई भाई बहिन के लिये सिर पीट रहा है—किसी घर में दियाही नहीं जलता किसी घर का द्वारही बन्द—कहीं हज़ारों रेल द्वारा गड़प होते जाते हैं तो कहीं हज़ारों जहाज़ के साथ समा जाते हैं—कहीं लक्षावधि भूकम्प काल के हवाले कर देता है तो कहीं संग्राम में लाखों कट २ मृत्यु को प्राप्त होते हैं इत्यादि—कहाँ तक गिनावें काल अनेक प्रकार से भक्षण कर रहा है इस भांत कि जैसे सूखे पत्तों का समूह प्रचंड पवन से एक ढेर में जमा होता चला जाता है उसी प्रकार संसारी प्राणी काल के निस्सीम तथा अगाध पेट में सवेग समा रहे हैं अथवा—

"यथा प्रदीप्तं ज्वलनं पतंगा विशन्ति नाशाय समृद्धवेगाः।
तथैव नाशाय विशन्ति लोकास्तवापि वक्त्राणि समृद्धवेगाः॥"

जिस प्रकार चैतन्य अर्थात् प्राणी जगत् यम राज का भक्ष्य बन रहा है उसी प्रकार जड़ जगत् भी दिन प्रति दिन क्षय को प्राप्त होता जाता है। काल ने उस के लिये भी अनेक व्याधियां उत्पन्न कर रक्खी हैं जो अपने काम से कभी विमुख नहीं रहतीं। जैसे जीवों पर इसका अनेक

रूप से आधिपत्य है उसी प्रकार जड़ात्मक जगत् पर भी। देखिये, जो उत्तुंग राज प्रासाद; सुन्दर सभा स्थल; मनोरम बिलास मन्दिर; कीर्त्ति के स्तभ रूप हो कर दर्शकों के मन को हठात् मोहित कर देते थे, वह पवित्र भूमि जो मधुर साम गान से गूंजती थी वे सब अब स्वप्न के दृश्य हो गये। चिड़ियां तक चूं करने को नहीं दिखाई देतीं। सब काल के कराल गाल में मग्न हो कर धरातल से मिल गये। जो भग्नावशेष हैं वहां मकड़ी चमगीदड़ों ने अपना राज स्थापित कर लिया। दीवालों से पपड़ी निकल २ क्षय की सूचना देती जाती है। जो स्वाभाविक शोभा पहिले योगियों का चित्त चुरा लेती थी वहां अब एक ग्रामीण भी शान्ति नहीं पाता। जो भूमि पहिले रत्न गर्भा कही जाती थी वहां अब पशुओं को तृण तक मिलना कठिन है। वृक्षों में लताओं में वह लुनाई वा हरियाली कहां? वह पुरुष कहां? वह आमोद कहां? जो साधकों को वा मनीषी कवियों को एक मात्र अब लम्ब थे। केवल नाम मात्र को अंकुराते और बढ़ते हैं पर अल्प दिनों ही में जीर्ण शीर्ण हो शुष्क हो जाते हैं! पर्वत धूल हो जाता है, नदी नद सूख बालुकामय हो जाते हैं। जैसा उत्तर चरित्र में भवभूति ने कहा है "पुरायत्र स्रोतः पुलिनमधुनातत्रसरिताम्"—नगर का नगर खंडहर पड़ता जाता है धातुओं को मुरचा और ही हाल करता जाता है। घरों का भी वही हाल। दीमक घुन आदि कई प्रकार से यह जड़ जगत् का भी नाश होता चला जाता है। इसको कोई रोक नहीं सक्ता। इस लिये कहा जाता है कि "काल सब को कवलित किये डालता है" इस के लिये न राजा लगै न रंक, न हाथी लगता है न चिउंटी, न देव लगे न दानव, न भैंस लगे न बकरी, न कीट लगे न फितंगा, न झाड़ लगे न पहाड़॥

उपसंसार में इतना और कहना है कि इस अनित्य संसार में जो नित्य और सब का सेव्य है उस का कुछ आभास हम पांचवें पारग्राफ में ऊपर दिखला चुके हैं फिर भी यहां थोड़ा सा लिखते हैं कि ईश्वर सब नित्य पदार्थों का प्रकाशक है उस को न भूल कर सत्यमार्ग से उत्तम यश को प्राप्त करना सब को उचित है किम्बहुना॥

अनन्तराम पांडे रायगढ़

सभ्यता पिशाची सर्वनाशकारी हुई।

इस्मे कोई सन्देह नहीं यह सभ्यता पिशाची निश्चय सर्वनाशकारी हुई ज्यों २ बढ़ती गई मनुष्य के चित्त का सरल भाव आर्जव तथा सिधाई बराबर विदाई मांगती गई–झुठाई कुटिलाई निठुराई कपट तथा जाल फरेब सब विस्तार पाते गये–सभ्यता का प्रधान अंग विज्ञान का विकाश प्रकृति महा वृक्ष के तहस नहस करने में मूलोच्छेदी कुठार हुआ–जब तक इस नूतन सभ्यता का जन्म नहीं भया महर्षि तुल्य सरल भाव के हमारे निष्कपट पुराने आर्य पतित पावनी श्री भागीरथी तथा सरस्वती गोदावरी कृष्णा आदि अन्यान्य पवित्र नदियों के तट पर सघनवट वृक्ष की शीतल छाया में सुमधुर ऋक् तथा साम के गान से समीप वर्तिनी अरण्य स्थली को गूंजते हुये अपने शान्त आश्रमो में सुखासीन हो विविध विज्ञान तथा अर्थकरी अनेक चातुरी लोकोपकारी अनेक शिल्प और दूसरी २ ऐसी विद्याओं का सूत्र पात कर गये जिनके मूल पर नूतन विज्ञान नूतन शिल्प नूतन सभ्यता मन माना विस्तार पा रहे हैं–यह हम अवश्य कहेंगे कि इस समय के लोग प्रत्येक विषय में पुरानो की आपेक्षा बड़ी उन्नति कर रहे हैं इन के दिमाग की कूअत बढ़ती ही जा रही है और कौन जानता है बढ़ कर किस छोर तक पहुंचेगी पर यह ज़रूर है कि कुटिलाई आदि अनेक बुराइयों कि वीज प्ररोह जननी यह मनुष्य जाति की मानसिक तथा आध्यात्मिक भलाई के ढहाने को कूलंकषा हो रही है–माना कि पुराने लोगों की अकिल और दिमागी कूवत इन दिनो के समान खराद पर नहीं चढ़ी हुई थी पर इस बात की वे बड़ी चौकसी रखते थे कि ऐसा न होने पावे कि हमारी सभ्यता बढ़ कर हमारी दिली या रुहानी तरक्की पर किसी तरह का सदमा पहुंचाये और दोनों को सत्यानाश या नष्ठ भ्रष्ट कर डाले–और इसकी चौकसी केवल यहां ही की गई सो नहीं वरन इतिहासों से प्रगट है कि इजिप्ट फिनीशिया ग्रीस रोम आदि भारत के समकक्ष जितने पुराने देश हैं सबों में ऐसा ही था–बड़े २ नगरों में तो सभ्यता का फिर भी बहुत कुछ प्रचार था पर ग्राम तथा जो स्थान शहरों ले दूर थे वहां के लोग तो निरे भोले भाले थे पर अध्यात्मिक या मानसिक उन्नति में अग्नि

पुंज से प्रकाशमान थे—ऋष्यश्रृङ्ग विभाण्डक के इतिहास से यह बहुतही स्पष्ट है—महाराज दशरथ को उन्हे अपने यज्ञ में लाने को कितना तरद्दुद उठाना पड़ा था—विभाण्डक ऋषि यद्यपि सभ्यता से बिल्कुल बहिर्मुख थे किन्तु अपने तपोबल में अद्वितीय और सूर्य से चमकते थे—पुरानी कौमो में जब समस्त देश का देश इस तरह के ऋजु बुद्धि वालों से पूर्ण था उस समय इस सभ्यता पिशाची को कहीं पांव फैलाने का अवकाश ही नहीं मिलता था ज्यों २ वह सीधापन और चरित्र की पवित्रता घटती गई नूतन सभ्यता अपना पांव पसारती और पंख फैलाती गई—अन्त को अब इस ओर छोर तक पहुंच हमें अर्द्ध शिक्षित असभ्य आदि शब्दों से कहते सर्वथा निष्किंच और निकम्मा किये डालती है लाचारी है "समयमेव करोति बलाबलम्" ॥

परमोत्तम तीर्थ।

भारत के अनुशासन पर्व में भीष्म पितामह ने महाराज युधिष्ठर से तीर्थों के वर्णन में यह कहा है—

अगाधे विमले शुद्धे सत्यतोये धृतिह्रदे।
स्नातव्यं मानसे तीर्थे सत्यमालंब्य शाश्वतम् ॥

सचाई जिस्में जल है थहाने से भी जिस्की थाह नहीं मिलती जो विमल और शुद्ध है ऐसे धैर्य रूप मानस तीर्थ में चिरस्थायी सत्य का सहारा लै स्नान करना चाहिये—

तीर्थं शौच मनर्थित्व मार्जवं सत्यमार्दवम्।
अहिंसासर्वभूताना मानृशंस्यं दमः शमः ॥
नोदकक्लिन्नगात्रस्तु स्नात इत्यभिधीयते।
सस्नातो यो दमस्नातः सवाह्याभ्यन्तरः शुचिः ॥

तीर्थों की गिनती में और भी ये तीर्थ हैं बाहर और भीतर से पवित्रता तीर्थ है; किसी से कुछ न मांगना भी एक तीर्थ के तुल्य है; सिधाई सचाई स्वभाव का मृदु होना; मनसा वाचा कर्मणा किसी की कुछ हानि

न करना; दया, इन्द्रियों को वश में करना; सब के साथ सम भाव ये सब तीर्थ हैं–अन्त में कहा है केवल जल से अपने शरीर को भिगोना ही तीर्थ स्नान नहीं है किन्तु जो इन्द्रियों को दमन किये हुये हैं वही भीतर बाहर से शुद्ध है वास्तव में तीर्थ स्नान उसी का है–

घुन।

घुन एक जाति का कीड़ा होता है। बड़ी २ शहतीरों को और अन्न राशियों को इस तरह भीतर ही भीतर नष्ट, निर्बल, खुक्ख और सार हीन कर डालता है जैसे जवानों के शरीर को व्यसन अथवा धनियों को खर्च की अधिकता। कहते हैं कि "तुम्हारे शरीर में तो ऐसा घुन लग गया कि फिर न संभले। कोई बुरा आदमी कहीं जा घुसा तो कहते हैं कि "वह उन के घर में घुन लग गया"। किसी खोटे से अच्छा काम बन पड़ा तो कहैंगे घुणाक्षर न्याय "घुन के अक्षर की नाईं" इससे यह काम बन पड़ा है इत्यादि। सारांश यह है कि घुन का उपयोग अच्छे ठौर नहीं आता खराब ही नाम रखने में यह बर्त्ता जाता है; देखने में अत्यन्त छोटा सा कीट है पर काम यह कि सैकड़ों मन बोझ की हवेलियों को थामने वाले काठ के आधारों को मिट्टी में मिला देता है; लाखों मन की अन्नराशि को ख़ाक कर डलता है। अन्न जो मनुष्य का जीवन और प्राण है उसी का दुर्धर्ष निष्ठुर शत्रु यह है अतः मनुष्य का भी बैरी हुआ– इस प्रकार एक दिन एक घुण राज को पुस्तक में देख कर सोचने लगे। बाद जब सो गये देखते क्या हैं कि वही घुणेन्द्र असुर रूप धारण कर हमें घुरेर रहे हैं। हम बहुत सकाए और सिट पिटा कर बोले "महाराज" भला आप से हमारा क्या लाभ है उत्तर मिला–"तुझे यह नहीं मालूम कि ईश्वर ने किसी को व्यर्थ नहीं जन्मा या? यदि मैं न होता तो यह मानवी सृष्टि का न जाने कब क्षय हो गया होता।" हम और भी चकराए; इस दून पर हंसी भी मालूम पड़ी पर दबा कर हम अचरज में आये और इसकी व्याख्या करने की विनय पूर्वक प्रार्थना की। उन्हों ने गम्भीर भाव से आगे के दोनों

पैर या हाथ (न जाने क्या) उठा कर इस भांत कहाः "फांसी देने वाले चांडाल जिन को अन्त समय पतित पावनी गंगा मिल जाती हैं दूसरे जन्म में अन्न के रोज़गारी बनिये होते हैं जो फस्ल पर अन्न सस्ते भाव से भर लेते हैं और मंहगी की बाट जोहते रहते हैं। ये ऐसे क्रूर होते हैं कि चाहो कोई भूख से मर क्यों न जाय पर ये टेघलने को नहीं। विशेषतः इन्हीं चांडाल काम के रोकने को परमात्मा ने हमें सिरजा है। यदि हमारा भय इन को न हो तो साल के साल अन्न ये न बेच डालैं वरन हुंडी लिख लिख कर एका कर के अन्न की ऐसी गहरी खींच मचावैं कि कुछ दिनों के वाद रुपये का रुपये भर भी अनाज न देवैं सुतरां मानवी सृष्टि ही को विलीन कर देवें। जब ये हमारे सैनिकों को देखते हैं "घुण लग्यो रे!" शोर मचाय बेचने की तैयारी करते हैं और इस प्रकार उन के अभीष्ट को धक्का पहुंचाता है॥"

कौन जाने यह हमारे घुन लगे मस्तिष्क की भ्रान्ति की अथवा सच मुच ईश्वर ने इस स्वप्न दृश्य के द्वारा सही बात बतलाई है— मा० प्र० भिलौंदूर

आलोचना।

कुमार संभव सार।

पं०-महाबीर प्रसाद द्विवेदी विरचित; जो संस्कृत नहीं जानते और कालिदास की कविता का रस चाखा चाहते हैं उनके लिये यह पुस्तक बड़ी उपयोगी है दूसरे यह कि द्विवेदी महाशय की यह रचना है जो सोने में सुगन्धि हो गई है-इसमें कुमार संभव के प्रथम ५ सर्ग का पद्यात्मक अनुवाद है नागरी प्रचारिणी सभा काशी के द्वारा यह ग्रन्थ प्रकाशित किया गया है-

शिमला प्रेक्षणम्।

पं-श्रीधर पाठक की सरस कवित्व प्रतिभा संस्कृत की कविता में भी टांग अड़ाए हुये है अनुष्टुप् छन्दों में शिमला का वर्णन इस में बड़ी योग्यता के साथ किया गया है-

चैतन्य चरितामृत।

हम धन्यबाद पूर्वक चैतन्य महा प्रभु के जीवन चरित्र का एक खण्ड आदि लीला नामक धन्यबाद पूर्वक स्वीकार करते हैं–यह ग्रन्थ संस्कृत से वंग भाषा में अनुवदित था जिसे श्री राधा चरण गोस्वामी ने शुद्ध ब्रज भाषा में अनुवाद कर रसिकों के मन को विनोदित किया है ग्रन्थ पढ़ने लायक है मूल्य ।) ॥

प्रेस निमित्त दान।

लवपुर निबासी बा–टेक चन्द ने १०) प्रेस के निमित्त हमें दिया है जिस का उक्त बाबू साहब को अनेक धन्यवाद है–हमारे रसिक पढ़ने वालों में थोड़े लोग भी हमारी सहायता करने में सन्नद्ध हो जायं तो यह हमारा प्रयत्न जल्द सिद्ध हो जाय दो मित्रों ने और एक ने १०) दूसरे ने १५) भेजा है पर नाम प्रकाश करने को उन्हों ने मना कर दिया है–

पं-शिवराम पंड्या के हम अति वाधित हैं जो इस कार्य में बहुत प्रयत्न कर रहे हैं–

युक्ति युक्त।

"युक्तियुक्तमुपादेयं वचनं बालकादपि।"

बालक भी युक्ति संगत कुछ कहे तो तो उसका कहना भी मानना उचित है इसी से कविकुल तिलक भारवि ने कहा है॥

"अविज्ञातप्रबन्धस्य वाचो वाचस्पतेरपि।
ब्रजत्यफलतामेव ;नयद्रुह इवेहितम्" ॥

वाचस्पति बड़े बावदूक वक्ता हो गये हैं देवराज इन्द्र भी जिन्हें अपना गुरू मानते थे नीति निपुण समझ इन्हें अपना प्रधान मंत्री किये थे सो वाचस्पति भी बात तथा प्रसंग के पूर्वापर को बिना समझे कुछ कह डालें तो उनका कहना भी वैसा ही निष्फल होता है जैसा नीति के विरुद्ध चलने वाले का अभिलषित–इसी से बुद्धिमानों ने कहा है–

असंभाव्यं न वक्तव्यं प्रत्यक्षमपि दृश्यते।
शिला तरति पानीयं गीतं गायति बानरः॥

जिस का होना संभव नहीं है ऐसी बात एक बार अपने आखों से देखी भी गई हो तो न कहै—जैसा पर्वत की शिला पानी पर तैर रही है बानर गीत गा रहा है—मनु ने भी कहा है "मौनात्सत्यं विशिष्यते" मौन अर्थात् सर्वथा चुप रहने से सत्य श्रेष्ठ है—तात्पर्य यह कि मौन रहना इस लिये अच्छा है कि बहुत बोलने का अभ्यास पड़ा रहेगा तो न जानिये क्या २ खुराफात मुह से निकल जाय तो भाई चुप रहना ही भला पर जो बोलैं सो सत्य ही तब मौन रहने की क्या आवश्यकता—सारांश यह कि सभ्य समाज में यदि हम प्रतिष्ठा पाने की इच्छा रखते हों तो युक्ति संगत बात बोलने का अभ्यास करैं—बहुत से गुणों के रहने पर भी बाचाट विद्वानों की मण्डली में आदर नहीं पाता—जन्म कुण्डली में मंगल पंचम स्थान में बैठ वाचटता का दोष पैदा करता है उसमें भी यदि मंगल पापी या नीच का हुआ और पाप ग्रह से सम्बन्ध या दृष्ट हुआ तब तो बाचटता झुठाई पिशुनता आदि कई दोष का करने वाला होता है—अस्तु युक्ति संगत बात कहने वालों के वचन का गौरव होता है सबी उस की बात का प्रमाण मानते हैं—अंगरेज़ी के सुलेखक या ग्रन्थकारों के गुरूगुरू एडिसन ने जिनका लेख पढ़ कर न जानिये कितने लोग बहुत अच्छे लेखक हो गये सभा में जहां दस या पांच आदमी इकट्ठे रसते थे कभी जीवन पर्यन्त मुह खोलने का साहस न किया कदाचित् इसका कारण यही रहा होगा कि उनको इस बात का बड़ा खयाल था कि युक्ति विरुद्ध कुछ मुंह से न निकल जाय कि छात्र मण्डली में हमारा परिहास हो जिस्से हमारे चित्त को क्षोभ हो—यह दोष हमारे नव युवकों में बहुधा पाया जाता है जो अपनी तालीम के उफान में आय न जानिये क्या २ बक डालते हैं और पीछे से हंसे जाते हैं वे जो इस कदर बढ़े हुये जोश खरोश को दबाते हुये युक्ति युक्त बोलने का अभ्यास करैं तो गदह पचीसी डांक जाने पर बड़े उत्तम बक्ता हों और उन के कथन का शिष्ट वृद्धजन भी आदर करैं और समाज में सर्वमान्य और पूज्य होते रहैं॥

हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै ॥
सूझै बिबेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि० २५ सं० ३।४ } प्रयाग { मार्च एप्रिल सन १९०३ ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहाय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥≡)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) —०*०— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १=)

—:००:—



हिन्दीप्रदीप

जि० २५ सं० ३ । ४ } प्रयाग { मार्च एप्रिल सन् १६०३ ई०

ज्ञान और भक्ति

ज्ञान और भक्ति दोनें परस्पर प्रतिकूल अर्थ के द्योतक मालूम होते हैं; ज्ञान के अर्थ हैं जानना या जानकारी और ज्ञ धातु से बना है– भक्ति भज धातु से बनी है जिसके अर्थ हैं सेवा करना या लगाना To serve or to devote–मनुष्य में जानकारी स्वछन्द या सर्वोपरि रहने के लिये प्रेरणा करती है जो अज्ञ या अबोधोपहत हैं वे ही दूसरे के आधीन या मातहत रहना पसन्द करते हैं–एक या दो मनुष्यों की कौन कहे समस्त जाति की जाति या देश का देश के साथ यह पूर्वोक्त सूत्र लगाया जा सक्ता है–अमरिका में ईस्टइंडियन्स और अफरिका के काफिर अथवा काले कुरूप हब्शी क्यों गुलाम बना लिये गये और यूरोप की सभ्य जाति ने सहज में उन्हे जीत अपने वशम्बद तथा आधीन बना लिया? इस लिये कि इन हवशियों में तथा ईस्टइण्डियन्स में ज्ञान तथा बुद्धि तत्व की कमी थी जो सर्वथा अज्ञ और अबोधो-

पहत होते हैं–ज्ञान आध्यात्मिक उन्नति Spiritual progress का मुख्य द्वार है नेशन में "नेशनालिटी" जातीयता और आध्यात्मिक उन्नति Spirituality दोनों साथ २ चलती हैं अर्थात् कोई कौम जब तक अपनी पूरी तरक्की पर रहती है तब तक रूहानी तरक्की का घाटा या अभाव उसमें नहीं पाया जाता–भारत में वैदिक समय आध्यात्मिक उन्नति का मानों एक उदाहरण था ज्यों २ उस में अन्तर पड़ता गया भारत आरत दशा में आय बराबर नीचे को गिरता गया–उपरान्त पुराणों की सृष्टि ने लोगों में बुद्धि का पैनापन न देख भक्ति को उठाय खड़ी किया इस लिये कि लोग ब्रह्मचर्य के ह्रास से बुद्धि की तीक्ष्णता खो बैठे थे उतने कुशाग्र बुद्धि के न रहे कि आध्यात्मिक बातों को भली भांत समझ सकें–भक्ति ऐसी रसीली और हृदय ग्राहिणी हुई कि इसका सहारा पाय लोग रूखे ज्ञान को अवज्ञा और अनादर की दृष्टि से देखने लगे और साथ ही साथ नेशनालिटी जातीयता को भी विदाई देने लगे–जिसके रफूचक्कर हो जाने से भारतीय प्रजा में इतनी कमज़ोरी आ गई कि पश्चिम के देशों से यवन तथा तुरुष्क और मुसल्मानों को यहां आने का साहस हुआ–इसी बीच स्वामी शंकराचार्य जन्म ग्रहण कर उसी रूखे ज्ञान को पुनः पुष्ट करने लगे– "संसार सब मिथ्या स्वप्न सदृश है; हमी ब्रह्म हैं; पाप पुण्य स्वर्ग नर्क दोनों एक और बन्धन के हेतु हैं" इत्यादि २ न जानिये क्या २ खुराफात प्रीच करने लगे–यहां तक कि प्रच्छन्न बौद्ध इन आधुनिक वेदान्तियों के अद्वैत वाद से महर्षि कृष्ण द्वैपायन के वेदान्त दर्शन में बड़ा अन्तर पड़ गया–प्रेम, सहानुभूति, प्राणपण के साथ स्वदेश गौरव का ममत्व, आदि जो जातीयता के बढ़ाने के प्रधान अंग हैं सबों पर पानी फिर गया आध्यात्मिक उन्नति जिसका ज्ञान एक अंग है उस में शंकर के अद्वैत बाद का कुछ भी असर न पहुंचा–बौद्धों को पराजय कर हिन्दुस्तान से निकाल देने ही के लिये शंकर महराज की विशेष चेष्टा रही इस लिये सायन माधव वाचस्पति आदि इन के अनुयायी तथा कुमारिल और गौड़पाद प्रभृति महा पण्डित जो शंकर के सम कालीन थे इन सबों की चेष्टा भी केवल बाद के ग्रन्थ निर्माण पर विशेष हुई–आर्षप्रणाली

छहां शास्त्र को सर्वथा भुला दी गई केवल बाद मात्र रहा; आध्यात्मिक विषयक वास्तविक Practical कुछ न रहा—हम पहले सिद्ध कर चुके हैं आध्यात्मिक उन्नति Spiritual progress और जातीयता Nationality या Politics मुल्की जोश साथ २ चलते हैं—हमारे यहां जिस समय महम्मद गोरी आदि अत्याचारी मुसल्मान विजेता सब ओर से देश को आक्रमण किये डालते थे उस समय संस्कृत में प्रत्येक विषय के कैसे २ आकर ग्रन्थ निर्माण किये गये पर उन में पलिटिक्स की कहीं गन्धि नहीं पाई जाती—वही चाल अब तक संस्कृत के पुराने पण्डितों में कायम है—लड़ना भिड़ना केवल अबोधोपहत राजपूत बेचारे और विषय लम्पट कतिपय राजाओं ही में रह गया—देश के विद्वानों में इसका कुछ भी असर न पड़ा—अन्त को यह कहावत ही चल पड़ी "कोई नृप होहिं हमें का हानी। चेरी छोड़ न होउब रानी" और अब तो इस अंगरेज़ी राज में दक्षिणा लम्पट इन कोरे पण्डितों का कुछ अद्भुत हाल हो गया कि जिस से कुछ शंशोधन या देश का उद्धार है उस में जहां तक वश चलता है अड़चन डालने को मुस्तैद रहते हैं—क्षत्रियों में जब जोश बाकी न रहा तो इन पण्डित और ब्राह्मण बेचारों की कौन बात रही—तालीम की धारा में सभ्यता के सामने ब्राह्मणों की चतुराई का खुलासा इन के वर्त्तमान बिगड़े हुये हिन्दू धर्म को पूछता कौन है—

अस्तु इसी समय स्वामी रामानुज तथा मध्वाचार्य जन्म ले सेव्य सेवक भाव की बुनियाद डाल अहं ब्रह्मास्मि के प्रचार को बहुत कुछ ढीला किया पर दासोस्मि दासोस्मि कह इतना दास्य भाव और गुलामी को लोगों की नस२ में भर दिया कि जिस से ब्रह्मास्मि ही बल्कि अच्छा था कि लोगों में स्वच्छन्द रहने की उत्तेजना तो पाई जाती थी—भक्ति का रसीला शुद्ध स्वरूप वल्लभाचार्य विशेष कर कृष्ण चैतन्य महा प्रभु ने दिखाया—प्रेम सहानुभूति ऐक्य आदि अनेक बातें जो हमारे में "नेशनालिटी" कायम रखने के मुख्य अंग हैं उन की जड़ जहां तक बन पड़ा

पुष्ट किया पर ये लोग ऐसे समय में हुये जब देश का देश म्लेच्छाक्रान्त हो रहा था और मुसल्मानों के अत्याचार से नाकों में प्राण आ लगे थे इस से अध्यात्मिक पर इन्हों ने बिल्कुल ज़ोर न दिया बल्कि यह कहना अनुचित न होगा कि ऋषि प्रणीत प्रणाली को हाल के इन आचार्यों ने सब भांत तहस नहस कर डाला—भक्ति मार्ग की उन्नति की गई किन्तु हमारी आध्यात्मिक अवनति के सुधार पर किसी की दृष्टि न गई—शुद्धस्फटिकसी भक्ति की जो विमल मूर्ति थी उस में से कज्जल सी कालिमा का उद्गार होने लगा—मूर्खता संक्रामित हिन्दू जाति के लिये यह भक्ति बानर के हाथ में मणि के सदृश हुई—अब इस भक्ति में दंभ जितना समा गया उतना चित्त की सरलता अकौटिल्य और सचाई नहीं पाई जाती—भक्ति मार्ग के स्थापित करने वाले महा प्रभुओं के समकालीन भक्त जनों में सच्ची भक्ति का पूर्ण उद्गार था; उन महात्माओं का कितना विमल चित्त था; अकुटिल भाव के रूप थे; यही कारण है कि उन्हे भगवान् का साक्षात्कार हुआ—मीरावाई सूरदास कुंभनदास सनातन गोस्वामी आदि कितने महा पुरुष ऐसे हो गये जिन के बनाये भजन और पदों में कैसा असर है जिसे सुन चित्त आर्द्र हो जाता है—मुल्की जोश की कोई बात तो इन लोगों में भी न थी उस की जड़ ही न जानिये कब से हिन्दू जाति के बीच से उखड़ गई पर परमार्थ साधन और आर्जव के तो वे सब लोग स्तम्भ सदृश हो गये—अब ऐसे लोग इस भक्ति मार्ग में क्यों नहीं होते यही एक पक्का सबूत है कि अब इस में भी केवल ऊपरी ढोंग मात्र रह गया—वास्तविक कोई बात न बच रही जिस से हमारे हिन्दू धर्म के विरोधियों को यह कहने का मौका अलबत्ता मिला कि यहां आध्यात्मिक कुछ नहीं है—दुनिया भर को अध्यात्म की रास्ता दिखाने वाला भारत आध्यात्मिक विषय से शून्य है ऐसा कहने और मानने वालों की कुण्ठित बुद्धि को हम कहां तक पछतांय—तवारीखों से साबित है कि ईसा और महम्मद आदि यहां का कण मात्र पाय सिद्ध हो गये—वही भारत के सन्तनों को समय के बलाबल से यह सब सुनना पड़ता है; सात समुद्र के पार से आय विदेशी लोग अब हमें ज्ञान देने

और सभ्यता सिखाने का दावा बांध रहे हैं लाचारी है-

नाहं निन्दे नच स्तौमि स्वभावविषमं जनम्।

परमात्मा की विषय रचना जिस का स्वभाव ही ऐसा है कि वह कभी एक रूप रंग में नहीं रहती उस के इस तरह के असम भाव पर दृष्टि फैलाय किस को निन्दा करें किस की स्तुति किसे बुरा कहैं किसे भला- कहा है "पिण्डे पिण्डे मति भिन्ना तुण्डे तुण्डे सरस्वती" एक २ मनुष्य के पिण्ड में समझ अलग २ है वैसा ही एक २ मुख से जो शब्द निकलते हैं सो भी जुदे २ होते हैं-जिसे एक भला समझता है उसे दूसरा बुरा कहने में तनिक भी नहीं संकुचाता-जब यह हाल है तो इस विषम रचना के जन समूह के बीच रहने सहने डोलने फिरने वाला कोई अपने को कितना ही संयमी सरल स्वभाव वाला माने बैठा हो क्यों कर निस्तार पाय बेदाग बचा रह सक्ता है-"काजल की कोठरी में एक दाग लागै पर लागै-" वरन सरल सीधे स्वभाव वाले को तो खल रूप यह कज्जल की कोठरी बहुत सहज में दगीला कर डालती है-नख और लोम के साथ खल की तुलना करते कविकर्णपूर ने बहुत अच्छा कहा है-

न लवोपि लवेन च व्यथायाः परिवृद्धौ विदुनोति यस्य सर्वः।
न खलो नखलोमतो मतो न्यस्तमवद्धाः किल के न संत्यजेयु॥

नख और लोम का बढ़ना किसे क्लेश नहीं देता जिस के काटने या कतरने में अणुमात्र पीड़ा नहीं होती; खल की तुलना नख और लोम के साथ दे कवि कहता है कि जो सब भांत स्वछन्द हैं वे क्यों न इन खलों को दूर ही से सरकाते रहैं और खल संचार दूषित समाज को भी दूर ही से साष्टांग दण्डवत् कर अपनी अविरत निरवच्छिन्न शान्ति में बट्टा न लगने दें-वरन खलों के निरन्तर आक्रमण पर भी सरल स्वभाव वाले उदार चित्त अपने सतत उदार भाव को नहीं छोड़ते-अपने बड़प्पन का खयाल रख ओछे छिछोरों के छिछोर पन से जो उन की अवज्ञा होती है उसे छिछोरों का स्वभाविक धर्म समझ अपने

अटल सिद्धान्त से रेखा मात्र इधर उधर नहीं टसकते सच है–

"स्थिरा शैली गुणवतां खलबुद्ध्या न बाध्यते।
रत्नदीपस्यहि शिखा वात्ययापि न शाम्यति" ॥

जिन की अनेक दोष दूषित शैली चरितावली समाज में मानो कोढ़ में खाज के समान है जिन की चतुराई और चालांकी का सर्वस्व दूसरे की रकम हज़म कर जाना है ऐसों को उन उदार चेताओं का उदार भाव उर्वरा पृथ्वी का एक खेत है जहां उन की जघन्य चरिता वली की खेती खातिरखाह उपज सक्ती है–इसी से नीति निपुण लोग शठस्यशाठ्यं कह गये हैं–शठों के साथ शठता न कर उन की उपेक्षा कर देने ही का यह फल होता है कि दुर्जन को अपनी दुष्टता देखाने का अवकाश मिलता है अस्तु यही सब समझ बूझ अन्त को इस विषम रचना ही का ऐसा क्रम जान क्षमाशील उदार भाव से मुह न मोड़ स्थिर चित्त बने रहते हैं–

चलता फिरता मेडिकेल हाल।

जब कभी इस असार संसार की ऊल जलूल बातों से दिमाग उलझन में आ जाता है तब यही जी चाहता है कि कोई ऐसी जगह जा बैठें जहां कुछ देर तक जी बहला रहे–जिन्हे चार अक्षर से भेट है उन को जी बहलाने को Library पुस्तकालय से बढ़ कर दूसरी जगह शायद ही कोई होती हो क्योंकि यहां सब प्रकार के; सब समय के; सब मत के; सब विद्या और भाषा के जानने वाले बड़े से बड़े माननीय योग्य धुरंधर विद्वान् महाशयों का वास रहता है–यहां समयराज लंगोटी लगाये एक कोने में सन्यासी की नाई खड़े रहते हैं क्योंकि दो हज़ार वर्ष के मनुष्य भी बूढ़े नहीं वरन नौ जवान कहे जाते हैं–ब्रह्मा विष्णु महेश आदि देवताओं से भी यहीं भेट हो सक्ती है; स्वयम्

योगीश्वर श्री कृष्ण भगवान संसार के सब काम काज छोड़ श्रीमद्भगवत्गीता बगल में दबाये किसी ऊनी या रेशमी आसन पर बैठे देख पड़ते हैं—एक ओर मोहम्मदसाहब भी तअस्सुब में भरे तसबी हाथ में लिये बुजुर्गाना लिबास में बैठे अपने शागिर्दों को कुरान पढ़ने की धुन में झूमते हुये देख सुन्दर लंबी डाढ़ी वाले मुह से मुसकिरा रहे हैं—एक ओर सेंटलूकस सेंट मेथूस सेंट पाल आदि बड़े २ नामी महात्मा अपने अन समझ अबूझ नये मुड़े चेलों को फुसलाते देख पड़ते हैं—रंग बिरंगे एडिटर रंग बिरंगी भाषा में अपनी ही गाये डालते हैं—बस इस से बढ़ कर कोई ऐसा स्थान नहीं जहां जाने से जी रमै—यही सब सोच विचार मैं एक निकटवर्ती पुस्तकालय में जा बैठा परन्तु भर्तृहरि जी ने ठीक कहा है "प्रायो गच्छति यत्र भाग्यरहितस्तत्रैवयान्त्यापदः"—क्या सोच आया था किस झंझट से और गड़बड़ में पड़ गया- मैं जैसे ही लाइब्रेरी के द्वार पर पहुंचा और छाता एक कोने में रख एक कुर्सी पर बैठा वैसे ही मेरे बांई ओर चार महाशय कई एक समाचार पत्र लिये कुछ पढ़ २ अद्भुत २ चेष्टा के मुह बना रहे हैं और सिर हिलाय कभी अपने पेट को दबाते हैं कभी कभी अपना माथा पकड़ कुछ मिनिट तक स्थापित मूर्ति के समान अचल रह जाते हैं—कोई अपनी आखें फाड़ दूसरे को दिखाता है; कभी कोई, अपने मुह बनाता है; मेरी समझ में पहले तो ये जादूघर के से अनोखे इशारे कुछ भी न आवे जब मैंने उन पत्रों पर ध्यान दिया जिन्हे देख उन की यह चेष्टा हो रही थी तब मुझे मालूम हुआ कि ये लोग "पेटेंटमेडिसिन" और हर तरह की औषधियों तथा रसों के एडवरटिज़मेंट "इश्तिहार" देख कर जिस मर्ज़ की वह इलाज है उन बीमारियों के नामों से कालम्स के कालम्स और पृष्ठ के पृष्ठ रंगे देख घबरा रहे हैं कि कोई बीमारी ऐसी नहीं जो उन्मे न पाई जाय—इस कारण वे रुष्ट से हो उठ खड़े हुये और उस जादू घर के अधिष्ठाता लइब्रेरियन महाशय के पास जाय उन से वैद्यक तिब्ब और डाक्तरी की किताब मांगलाये और उन किताबों का Index नामावली खोल बैठ गये और पढ़ कर अपने में देखने लगे कि इन पुस्तकों में

कौन से ऐसे रोग हैं जो उन में नहीं पाये जाते–कवर्ग आदि वर्णों के क्रम से पुस्तक खोलते ही रोगों की नामावली मिलने लगी–कब्ज़ जिस की शिकायत उन सबों को जन्म ही से थी; कमर में दर्द भी जब पुरबा हवा चलती थी तभी हुआ करता था; कमज़ोरी दिमाग तो एक मामूली बात थी; खांसी खुजली खून के खराब हो जाने से वे कोई भी खाली न थे; "ग" की नामावली पढ़ लगे बगलें झांकने और इशारों ही में अपनी व्यवस्था एक दूसरे से कह डाली–उन्मे से एक बोला अजी शरमाते क्यों हो "गिरते हैं बस सवार ही मैदान जंग में" इस मर्ज़ में तो हज़ारों शरीफ अमीर कबीर नौ जवान सोलह वर्ष के गबरू से साठ वर्ष के बूढ़े तक गिरिफतार हैं तभी तो हर एक अखबारों की नोटिस गरीब अमीर हर एक के मतलब की मंहगी सस्ती सब दाम की दवाइयां निकला करती हैं–हज़ारों कविराज और वैद्य इसी बीमारी की बदौलत तोंद फुलाये बैठे मौज कर रहे हैं जिन के घर पर बराबर Orders पहुंचते रहते हैं; टके की दवा के दो दो चार चार रुपये दाम लेते हैं–नई जवानी का जोश कोना अंतरा झाँकने की आदत के कारण मर्ज़ मुबारिक में गिरफतार हो गये घर में कोई जानने न पावे और बाबू साहब चंगे हो जांय बस लइब्रेरी में पहुंच अखबारों की दो एक एडवरटिज़मेंट पढ़ घर आय तुरन्त हाल अपना लिख अमुक कविराज को अमुक Doctors...cure,, की शीशीयां या डिबियां V.P. से मङ्गा लिया–एक ने कहा तो इस में शर्म की क्या बात है यह तो एक बार सबों को निकलती है नई जवानी की तो यही शोभा है–यह उन की बात चीत सुन मैं कुछ सोचने लगा कि वे कई एक बीमारियों के नाम और उन की जांच कर गये–घ पर आये तो घबराहट जो इन दिनों किसे नहीं रहती एक न एक तरह की घबराहट में सब मुबतिला रहते हैं और इन चारों में तो न जानिये कहाँ की घबराहट का मजमूआ था–आगे चेचक छाती का जलना ज़ुकाम ज़हरबाद झांई टुनकी दस्त दमा दाद धातुक्षय नसूर प्रमेह फिरंग बवासीर भगन्दर मदरोग यकृत लुंज सिफिलिस क्षयी इत्यादि इत्यादि सब रोगों को पढ़ते और अपने में उन को पाते हुये देख थोड़ी देर में ऐसा चक्कर आया कि होश हवास सब जाते रहे और

ई उन्मे से गिर पड़े परन्तु चौथे महाशय जिन के होश हवास दुरुस्त रहे तुरन्त किसी अखबार में दवा ढूंढ़ समीप के एक औषधालय से लाय उन के सिर में मलने लगे जब होश ठिकाने हुये तो एक उन में से बोले क्यों जौ लोग इन्ट्रेंस या एफ–ए–की परीक्षा पास कर नाहक ५ वर्ष मेडिकल कालेज में जा अपनी ज़िन्दगी बरबाद करते हैं और सैकड़ों रुपये किताबों के खरीदने में खोते हैं जितनी बीमारियां उन की किताबों में हैं सो तो सब हमारे शरीर ही में मौजूद हैं–यदि वे ५ ही महीने हमारी सेवा करें तो हम सब लोग मिल कर दस्तखत कर उन्हे डाक्टरी पास करने की सरटिफिकेट दे दिया करें और वे बिना प्रयास ही डाक्टर बन बैठें–उन का यह समझौता और बात चीत सुन मुझे कुछ हंसी आई कुछ क्रोध भी और यही मैंने निश्चय किया कि दवाईयों का ऐडवरटिज़मेंट भी धूर्तों की धूर्तता का छोर है; सभ्य जाति में भारत की जीट उड़ाने का एक मात्र सहारा है–डाक्टरी चिकित्सा के मुकाबिले योंही देशी चिकित्सा नित्य गिरी जा रही है ये लोग उसे जल्द गिरा देने के हेतु होते जाते हैं–ईश्वर को कुछ ऐसा ही मंज़ूर है कि हमारे में जो भलाई है सो भी ऐगुण और दोष में दाखिल कर ली जाय लाचारी है

ब्र–मो–कूल

वेंकटेश्वर की बेतुकी तान।

इस देश के यह भी अभाग्य हैं कि कोई बीर पुरुष किसी प्रकार के संशोधन की ओर दत्त चित्त हो कुछ कर के दिखलाया चाहे तो कितने धर्म दांभिक उस में ऐसा अड़चन छोड़ने को मुस्तैद हो जाते हैं कि उस संशोधक की लेव देव करने में ज़रा भी आगा पीछा कुछ नहीं सोचते–भारत में अब भी कितने स्वछन्द राज्य हैं कि वे अपनी २ रियासतों में कोई सामाजिक संशोधन किया चाहें तो उन्हे पूर्ण अधिकार है

बहुत कुछ कर सक्ते हैं किन्तु उन्हे अपने ऐश आराम से कहां इतनी फुरसत और इतनी अकिल कहां कि कुछ कर दिखावें-बरोदा नरेश इन दिनो शुभचितों के सिर मौर हैं श्रीमान् कई बार यूरोप के सभ्य देशों में हो आये हैं उन्नतिशाली यूरोप की अनेक बातों को देख भाल और अपने यहां उन का अभाव पाय धीरे २ उन का अपने यहां प्रचार करने में सयत्न हो रहे हैं-दूसरी बात यह भी है कि महाराज अंगरेज़ी के पूर्ण विद्वान् हैं नई रोशनी और नये खयाल के बड़े पक्षपाती हैं जो कोई बुराई में दाखिल नहीं की जा सक्ती-हकीकत हाल भी यही है कि जब तक हम घृणित पुराने ढर्रे को न छोड़ैंगे या उस में कुछ अदल बदल न कर पुरानी बातें और पुराने खयाल का पीटना पीटते हुये निरे दांभिक धर्मभीरु निकम्मे अपाहिज बने रहैंगे कभी आगे बढ़ने का साहस न कर सकैंगे और हमारी हिन्दू जाति नीचे ही को गिरती जायगी-उन भांत २ के पुराने ढर्रों में बाल्यविवाह सब से बढ़ कर कोढ़ है जिस के बिना उठे हम और बातों में कितनी ही तरक्की करैं विद्योपार्जन और बुद्धि तत्व के विकाश में साक्षात् वाचस्पति क्यों न हो जांय कभी मुल्क की तरक्की न कर सकैंगें-अफसोस जब इस भूमण्डल के सब देश आगे बढ़ते जाते हैं हम पुराने ढर्रे का पीछा पकड़ गिर रहे हैं-इसी लिये इस महा असाध्य रोग के हटाने को महाराज ने १४ वर्ष के नीचे कन्या का विवाह न करने के लिये कानून अपने राज्य में कर दिया-हमारे धर्म सम्बन्धी कार्य और समाज सम्बन्धी व्यौहार में राजा का हस्तक्षेप बहुत ही उचित है विशेष कर जब अपने देश का राजा है तब ऐसा होना ही चाहिये-देखिये मनु ने दण्ड के प्रकरण में क्या २ लिखा है जिस से प्रगट है कि प्रजा क्रम विरुद्ध चलने लगे अथवा ऐसे अनुचित बर्ताव से वर्तने लगे जिस से हमारे में क्षीणता और कमज़ोरी आने की सम्भावना है तो उस कुरीत वर्तने वाले को दण्ड के द्वारा ठीक करे-तब उन्नतिशील महाराज ने विवाह के सम्बन्ध में जो नियम बांधे सो बहुत ही उचित और पेशबीनी का काम किया-अभी हम लोगों में बिवाह के सम्बन्ध में

और बहुत से कोढ़ लगे हैं महाराज को चाहिये धीरे २ उन सबों को भी साफ करते जांय और कुछ न करैं तो ऐसा कोई एक नियम तो अवश्य करदें कि जो कोई लड़के का विवाह खासी तिजारत समझ दहेज का करार करे उस से इतना जुर्माना लिया जाय और जुर्माना अदा न होने पर कैद की सज़ा दी जाय-वेंकटेश्वर ने लिखा है "र जो दर्शन के पीछे कन्याओं का विवाह हिन्दू धर्म पर कुठार चलाना है" हम कहते हैं समस्त हिन्दू जाति पर कुल्हाड़ा चलने से केवल धर्म पर कुठार का चलना फिर भी अच्छा जो एक दिन अवश्य चले ही गा क्योंकि अधर्म के रूप में धर्म को आप कै दिन बचाये रहेंगे-जिसके बिना बाल्य विवाह के उठाने की जितनी चेष्टा सब व्यर्थ होंगी-

कर्मचारियों के अत्याचार का ज़िकिर केवल अपनी बात पुष्ट करने के लिये लिखा है-जिसने यह कानून बनाया और प्रजा की भलाई का जिसे इतना खयाल है वह कर्मचारियों के अत्याचार को बरदाश्त कर लेगा-वेंकटेश्वर तथा और २ समाचार पत्रों को इस पर दूर दृष्टि नहीं होती कि यह हम क्या कर रहे हैं कि जब गवर्नमेंट को यह खबर पहुंचेगी कि राज्य की प्रजा महाराज से असन्तुष्ट है तब वह किस भांत इन के साथ पेश आवैगी-योंही इन की स्वच्छन्दता पर कुछ खटक है तब तो पूरा बहाना मिल जायगा-"शुभस्य शीघ्रम्" महाराज को इस विषय में किसी से कुछ सम्मति लेने की कोई आवश्यकता नहीं है अभी मूर्ख प्रजा इस के फाइदे को नहीं समझसक्ती पीछे लोग जानेंगे कि इस से बड़ौदा प्रान्त का क्या उपकार हुआ और आश्चर्य क्या और २ प्रान्तों के लोग इस का अनुकरण करैं-खेद है जब इसे वेंकटेश्वर धर्म की हानि कहते हैं तो धर्म का लाभ किस से होगा ? आगे काशी के पण्डितों की एक व्यवस्था वेंकटेश्वर ने दिया है-पहले तो काशी के पण्डितों की व्यवस्था रुपये पर बिका करती है जैसा रुपया खरचो वैसी व्यवस्था लेलो दूसरे यह कि काशी वाले किसी संशोधन की बातों के प्रतिकूल होने के सिवाय कभी अनुकूल भी हुये हैं-फिर संशोधन में केवल धर्म ही का मुख देखते रहना कैसा ? धर्म भी कौन

जिसे हिन्दुस्तान के बिगड़े ज़माने में प्रचार पाये बहुत थोड़े दिन हुये हैं–स्वार्थी लोगों ने जैसी प्रजा की झुकावट और रुचि देखा वैसा गढ़ दिया ; कदाचित् वैदिक समय के बेलौस और स्वार्थ तथा पक्षपात शून्य ऋषि इस समय होते तो वे कभी काशी के पण्डितों की भांत ऐसी व्यवस्था न दे देते–संशोधन में देश के लोगों की बिगड़ी या बनी हुई दशा ; मुल्क की आबोहवा ; राजा की ओर का बर्ताव आदि कई बातों का खयाल चाहिये–इन सबों में संशोधन से कोई हानि न पहुंचती हो बरन लाभ हो तो उस समय जो धर्म प्रचलित हो सो भी सही नहीं तो संशोधन में केवल धर्मही पर मूड़मुड़ाये न बैठा रहे–और अब तो सब ओर तालीम और सभ्यता के सूर्य की किरने छिटक रही हैं ऐसे समय हम कल्पित धर्म की रक्षा में व्याकुल रह जैसा हमारे पहिले के लोग अपना भविष्य बिगाड़ते आये हम भी वैसाही बिगाड़ते चले जांय यह कौन सी बुद्धिमानी है–वैदिक समय के ऋषि तो सर्वथा आप्त और माननीय थे हम को तो अवतारों के मानने में इतनी श्रद्धा नहीं है जितनी इन ऋषियों में है–जिन के महत्व का एक सबूत यही है कि जब तक हम उन के कहे के अनुसार चलते रहे आर्य जाति का पूर्ण वैभव था –भारत के युद्ध के बाद भी नन्द और चन्द्रगुप्त के समय तक ऐसे ब्राह्मण अवश्य मौजूद थे जो ब्रह्मवर्चस और तपश्चर्या में पूर्वज ऋषियों के सदृश थे जिनमें सब तरह की ताकत थी और बुद्धितत्व के विकाश में भी नई सभ्यता और नये विज्ञान के साथ टक्कर मारने को सर्वथा प्रस्तुत थे–शंकराचार्य के समय तक भी उनमें कुछ २ वह ताकत रही आई यद्यपि बौद्ध और जैनियों के उपद्रव से उस क्रम के लोग नित्य २ वंश परम्परा में घटतेही गये–उपरान्त यवनों के अत्याचार से तो छिन्न भिन्न हो उन की तपस्या आदि में अन्तर पड़ता गया सबों का ऐक्य न रहा अपने २ मन की खिचरी पकने लगी--इस समय की भांत २ की कुरीतियाँ जिन्हें हम धर्म मान बैठे हैं और बहुत से ग्रन्थ जिनका हम वेद के तुल्य प्रमाण मानते हैं सब इसी समय चल पड़े–बहुत से मत और भिन्न २ सम्प्रदायें भी इन्हीं समयों में चलाई गईं जिससे हिन्दू जाति इतनी शीर्ण जीर्ण और छिन्न भिन्न हो गई कि

सिवाय पराधीन हो येन केन कालक्षेप करने के पौरुषेयत्व की कोई बात रही न गई; नितान्त धर्म भीरू हो गुलामी ही को अपना ज़ेवर मान बैठे हैं—यही कारण है कि हमें इधर के अपने पूर्व पुरुषों पर बिल्कुल श्रद्धा नहीं है न उन्में आप्तता बच रही; अंगरेज़ी शिक्षा के प्रचार से उन की अनेक कल्पनाओं की पोल भी खुलती जाती है—अस्तु हम बहुत बक गये कितने लोग हमारे इस लेख को पढ़ न जानिये हमारे बारे में क्या २ कल्पना करेंगे पर जो कुछ अपनी स्वच्छन्द अनुमति हो सो क्यों न प्रकाशित की जाय—।। इति०।।

शुभ अवसर।

१

बहुत दिनों के बाद देखिये। आरत भारत भू ऊपर।
प्राण पारिजातक प्रसून है। खिला भ्रमर जन आनँद कर॥
भारत महा मसान बीच। अति मंगल वाद्य श्रवण कीजै।
धन्य हमारे भाग्य। प्रेम से धन्यवाद प्रभु को दीजै॥

२

कटा पुराना घृणित कुहूतम*। उदय हुआ सौभाग्य रवी।
काल रात्रि दुख की बीती है। लखो मात की विमलछवी॥
पुत्र वत्सला दुखिनी माता। शोभित चहुंदिशि सागर है।
आंख खोल आओ सुबन्धुगण। सेवा का शुभ अवसर है॥

३

चारो ओर पुनर्नव जीवन। हुआ सुजागृत प्रानों में।
चतुर्दिक्षु आशा की बाणी। सुन पड़ती है कानों में॥

*अमावस की रात।

तरू जातीय ; ऐक्य जल सिंचित । ललह उठा है सुखदाता ।
अब छाया ; शुठि फूल फलों से । युक्त कीजिये हे भ्राता ॥

४

यदपि परस्पर भेंट कराती । है ; हम सब की पूर्व दशा ।
भर देती है अश्रु दृगों में । उतार देती सबहि नशा ॥
तौभी ; चिन्ता छोड़ धैर्य धर । आलस का मुंह कालाकर ।
फूट बेल को काट ; प्रेम जल । बरसाओ तरुवर ऊपर ॥

५

दुख रोने से कुछ नहिं होता । जो निशिबासर रोते हैं ।
रोते २ आंख दुखाते । बरसों वे खो देते हैं ॥
सच कहता हूं प्यारे मित्रो । कहने का फल करना है ।
कर्माङ्गण में स्थिर आसन हो । पौरुषेय गुण लाना है ॥

६

विना कर्म इक निमिष मात्र भी । कोई नहीं रह सक्ता है ।
मातृ भूमि सेवा बिन उसको । धिक् जो केवल बक्ता है ॥
इस नव जुग में यही समय है । स्वार्थ बासना मिट जावै ।
देशोद्धार करें मिलि भाई । सत्कवि सब का यश गावै ॥

अनन्त राम पाण्डेय रायगढ़

जाको जौन स्वभाव जात नहिं जीसे ।

इसी पर कवि ने भी लिखा है और बड़ी अच्छी उक्ति युक्ति से ऊपर की बात को सिद्ध किया है–

शतधा सिञ्चमानोपि पयसा निम्बपादपः।
जातिदोषस्वभावेन कटुकत्वं न मुञ्चति॥

नीम का पेड़ सौ बार दूध से सींचा भी जाय पर अपने जाति का स्वभाव कडुआई को नहीं छोड़ता–

यश्च निम्बं परशुना यश्चैनं मधुसर्पिषा।
यश्चैनं गन्धमालाभ्यां सर्बस्य कटुरेव सः॥

जो कोई नीम को फरसे से काटता है; जो कोई इसे शहद और घी से सींचता है; जो गन्ध और माला से इस की पूजा करता है सबों को यह कडुईही रहती है–तात्पर्य यह कि जो स्वभावही से खल हैं उन को चाहो कितनी प्रतिष्ठा करो या बेकदरी वे अपनी जाति का स्वभाव नहीं छोड़ते–

कर्पूरधूलीरचितालबालः कस्तूरिकापङ्कनिमग्ननालः।
सुवर्णकुंभैः सुधयाभिषिक्तस्तिक्तं गुणं मुञ्चति किं पलाण्डुः॥

पिसे हुये कपूर की धूलि से थावला बनाया गया हो; कस्तूरी के कीचड़ में सदा चोटी तक डूबा हुआ हो; सोने के घड़े में अमृत से सींचा गया हो तौ भी क्या प्याज़ अपना कडुआपन छोड़ बैठेगा? "स्वभावो दुरतिक्रमः" ऐसा बुद्धिमानों का कथन है जिसका बर्ताव संसार में पूरा २ वैसाही पाया भी जाता है–ईश्वर ऐसों के सम्पर्क से बचाये रहे–

प्रश्नोत्तर मालिका।

१ कः परिहार्योदेशः? पिशुनयुतोलुब्धभूपश्च।

कौन सा देश त्यागने योग्य है:–जहां खल रहते हैं और जहां का राजा लोभी हो

२ केनाशोच्यःपुरुषः? प्रणतकलत्रेण धीरपुत्रेण।

कैसे मनुष्य का शोच नहीं होता? जिसकी स्त्री नम्र और पुत्र धीर बीर है–

३ इह भुवेन कः शोच्यः? सत्यपि विभवे यो नदाता स्यात्।
इस जगत् में कौन मनुष्य शोचनीय है? धन पास होने पर भी जो उदार दान शील न हो–

४ किं लघुतायाः मूलम् ? प्राकृतपुरुषेषु या याञ्चा।
आदमी में हलकाई आने का क्या मूल कारण है? अपने से कम औकात वाले के सामने हाथ पसार कुछ मांगना--मेघदूत में कविकुल गुरु कालि दास ने भी ऐसाही कहा है–

'याञ्चा मोघा वरमधिगुणे नाऽधमे लब्धकामा'

५ रामादपि कः शूरः ? स्मरशरनिहितोऽपि यो नचलति।
श्री रामचन्द्र से भी अधिक शूर वीर कौन है? काम बाण से पीड़ित हो कर भी जिस का चित्त चलाय मान न हो–

६ किमहर्निशि चिन्त्यम्? केशवचरणौ जनसमूहहितम्।
राती दिन किस की चिन्ता करना उचित है? भगवान् के चरण कमलों की और जन समूह के हितकी--

७ के खलु नयनविहीनाः? परलोकं ये नपश्यन्ति।
नेत्रों के होते भी अन्धे कौन हैं? जो इस बात को नहीं देखते कि इस असार संसार से बिदा होने पर क्या होता है–

८ इह खलु बधिरतमाके? हितवचनं ये नशृणवन्ति।
यहां सब से अधिक बहिरा कौन है? दूसरे के कहे हित के वचन को जो नहीं सुनते–

९ इह को नरकनिवासी ? नाविनीता यस्य दृश्यते भार्या।
यहां जीतेही नरक में कौन पड़ा है? जिस को कुभार्या मिली है–

१० कः प्रथितो भुवि खंजः? व्रजति न यो वार्द्धके तीर्थम्।
पृथ्वी में लँगड़ा कौन है? जो बूढ़ा हो कर तीर्थ को न गया–

को मूकः खलु लोके? प्रियवचनं यो न भाषते सदसि।

गूंगा किसे कहना चाहिये ? जो सभा में बैठ सोचती बात न बोले—

१२ को हि सहायः सुदृढ़ः ? निष्कपटेनार्जितो धर्मः।

अपना बड़ा पक्का सहायक कौन है ? धर्म जो बिना किसी छल या बहाने के अनुष्ठान किया गया—

१३ कः खलु कमलदिनेशः ? सति गुणविभवेऽपि यो नम्रः।

कमलों को प्रफुल्लित करने को सूर्य के सदृश कौन है ? जो बहुत से गुण और सम्पत्ति होने पर भी अभिमान में न फूल नम्र बना रहे—

१४ कस्य वशं जगदेतत् ? प्रियहितवचनस्य धर्मनिरतस्य।

समस्त संसार किस के वश में है ? प्रिय और हित बचन बोलने वाले के और जो धर्म में प्रवृत्त है—

१५ परधनहृदयहाराके ? सत्कविताबेशवनिताच।

दूसरे का धन हर लेने वाले और दूसरे का मन अपनी मूठी में कर लेने वाले कौन हैं ? मनोहर कविता और बार विलासिनी—

१६ कं न स्पृशति विपत्तिः ? धर्मपथोवर्तिनं च दातारम्।

विपत्ति किस के पास नहीं फटकती ? जो धर्म के मार्ग पर चलता है और दाता या उदार है—

१७ कस्मै स्पृहयति कमला ? निश्चलचित्ताय नीतिवृत्ताय।

लक्ष्मी किस के पास रहने की इच्छा रखती है ? जो स्थिर चित्त अपने सिद्धान्तों का दृढ़ है और नीति पूर्वक चलता है—

१८ किमगाधमम्बुधेरपि ? खलचरितं शब्दविद्याच।

समुद्र से भी अधिक अथाह क्या है ? खलों का चित्त या चरित्र और व्याकरण शास्त्र–

१९ कुत्रविधेयोवासः ? सज्जननिकटेऽथवा तीर्थे ।

कहां जाकर बसना उचित है ? सज्जन के पास या तीर्थ में–

२० किं मुक्तिवल्लिमूलम् ? गंगासेवा हरेरर्चा ।

मुक्ति लता का मूल क्या और कहां है ? स्नान पान आदि के द्वारा श्री गंगा या गंगाजल का सेवन और विष्णु भगवान् का पूजन–

२१ कः खलु हस्तविहीनः ? यः प्रहरति न समुद्यते शस्त्रम् ।

हाथ का लुंजा कौन है ? शस्त्र हाथ में लिये मारने को उद्यत है उसपर अपने को बचाने को जो शस्त्र नहीं चलाता–

२२ कः खलु स्ववंशघाती ? द्विजगुरुनिन्दादवानलारूढ़ः ।

अपने वंश का नाश करने वाला कौन है ? ब्राह्मण और गुरू की निन्दा रूप दावानल में जिस ने अपने को होम कर दिया है–

२३ कस्तरति भवसमुद्रम् ? यस्य विषये न रुद्धचेतोस्ति ।

भवसागर के पार कौन जा सक्ता है ? जिस का मन विषय वासनो में फसा हुआ नहीं है–

२४ किं स्त्रीविनाशमूलम् ? स्वातंत्र्यं पुम्वदाचरणंच ।

स्त्रियों के बिगड़जाने का कारण क्या है ? स्वतंत्र हो रहने की इच्छा और मरदों के सदृश आचरण––

कः पंडितः प्रशंस्यः ? प्रसरति न वाक्यमरुन्तुदं यस्य ।

प्रशंसा के योग्य पण्डित कौन है ? जो ऐसा बचन नहीं बोलता जिस से किसी का मर्म ताड़न हो––

२५ भजति न कं वै कमला? मलिनमशुचिं च सालसं पुरुषम्।

लक्ष्मी किस के पास जाना नहीं चाहती? ऐसे पुरुष के पास जो बाहर या भीतर से मैले अपवित्र हैं और आलस्य के रूप हैं—

भारत का भविष्य क्या होगा।

इस बात से किसी को इनकार न होगा कि हिन्दुस्तान में अंगरेज़ी राज्य की स्थिरता का मुख्य कारण सर्वसाधारण के चित्त में इस बात का दृढ़ विश्वास का होना है कि इन का शासन उदार भाव सम्पन्न है और इनसाफ भरपूर किया जाता है—यही सबब हुआ कि पूर्व में जब अंगरेज़ी राज्य यहां विस्तार पाने लगा तब उस में नये २ राज्यों के मिलाने में यहां के लोग इन के सब तरह सहकारी हुये और जब २ काम पड़ा पूरी २ मदद दी--यदि यह बात न होती तो कभी सम्भव न था कि सन् ५७ के बलवे के उपरान्त इन का कदम यहाँ जमा रहता--मुगलों के एकाधिपत्य के तहस नहस होने पर जैसी कुछ राज विराजी और अंधाधुन्ध यहां फैली हुई थी उससे लोग ऊब गये थे और चाहते थे कि यहां कोई ऐसा स्थिर शासन कायम हो कि सब ओर शान्ति रहै जिस के लिये यह देश कई सौ बर्ष से तरस रहा था--सो वैसाही हुआ भी मानो मुहमांगी बकशीस इन्हें मयस्सर हुई--ठग और डकइतों के निर्मूल हो जाने से लोगों के जान माल की भरपूर रक्षा हुई; फौज़दारी और दीवानी के महकमे कायम होने से उचित न्याय में कोई मीन मेख न रहा; शहर २ और गांव २ स्कूल और पाठशालाओं के स्थापित होने से सब जाति और सब दरजे के लोगों के नवयुवकों की मानसिक उन्नति का सहज द्वार खुल गया; कलकत्ते से पेशावर तक पक्की सड़क और रेल के हो जाने से आने जाने का अच्छा सुविधा हो कर ब्यापार की उन्नति की गई; नहरैं और स्थान २ में बांध बंध जाने से खेती की तरक्की हुई; और यह सब ५७ के बलवा के

दबजाने के उपरान्त राज्य में सुस्थिर शासन प्रणाली का परिणाम है--लोगों के मन में यह पूरा विश्वास जमा रहा कि ये नये शासन कर्ता हमारे देश के शुभ चिन्तक सब भांत सच्चे जी से हमारी भलाई और हमारी हर तरह की तरक्की चाहने वाले हैं--इसी लिये छोटे बड़े खास आम सब दरजे के लोग प्राण पण से इनका साथ देने को उद्यत रहे--लार्ड कुर्ज़न महोदय ने अपनी दरबार की स्पीच में ऐसा कहा भी कि "अपने उत्तम शासन में इंगलैंड यहां वालों की शुद्ध राज भक्ति और सिधाई से हिन्दुस्तान का विश्वासपात्र बना" पर उस विश्वास और शुद्ध राज भक्ति का बदला इङ्गलैंड ने क्या चुकाया? प्रभु सेवा के जोश में भर मानो दिया हाथ में ले हमने अपने घर का एक २ कोना अंतरा सब दिखला दिया-- सर्वतोभावेन पूर्णअधिकारी हो इंगलैंड इंडिया को सब ओर से आक्रमण कर हर तरह पर अपने चंगुल में इसे अलबत्ता कर लिया क्या ताकत कि कोई ज़रा भी हिल डोल सकै--

अब आगे चलिये जिन्होने राज बिराजी और अंधा धुन्ध से देश में स्थिर शासन देखा था और उस का सुख उठाये हुये थे अब न रहे तो निश्चय है कि वह पुरानी याद और साथही साथ पुरानी हमदरदी जित और जेता दोनों में कमज़ोर होती गई बरन कहीं २ पर तो बिल्कुल भुला भी दी गई--ऐसे समय शासन कर्ता का मुख्य काम था कि अपने कामो से उस हमदरदी को नई और तरोताज़ा करते रहते बल्कि बढ़ाते जाते जिस्से लोग सन्तुष्ट रह जैसा अब तक प्राणपण से साथ देने को मुस्तैद थे वैसाही बने रहते--सो न हो ऐसा मालूम होता है जिस नेब या बुनियाद पर प्रभु सेवा और सच्ची भक्ति का पवित्र मन्दिर बनाया गया था वह हिलती देख पड़ती है--योंही हिल रही है समय २ प्रभुवरो से ऐसे २ काम बन पड़ते हैं कि जिससे उस का पुष्ट पड़ना और उस की मरम्मत होना एक ओर रहे बरन नेह के डग मगाने का सन्देह है-उन कामों में सब से बढ़ कर हम लोगों की शिक्षा का घटाना है जिस्से बड़ी हानि की संभावना है--सिवा इस

के अनेक ऐसे और काम हैं जो इस उदार शासन में धब्बा लगा रहे हैं जिन को गिनाने बैठें तो पेज का पेज रंग जाय और हम व्यर्थ को डिसलायल हो किसी काम के न रह जांय--"फलंन किंचित् अशुभा समाप्तिः" यही सब सोच विचार आज हमें कहना पड़ता है कि भारत का भविष्य क्या होगा--

देश की अवनति।

इतिहास के ग्रन्थों के पढ़ने से हम क्या २ लाभ उठाते हैं यह कदाचित् सभी सुपठित जानते हैं किन्तु अधिकांश उनमें के ऐसे हैं जो इतिहासों की विविधि घटनाओं की तवारीख का गट्ठर के अतिरिक्त और कुछ नहीं समझते-यही कारण है कि बहुधा छात्र दशा में लड़कों को तवारीखों के पढ़ने में अरुचि सी रहती है जिन्हें यह मानो लोहे के चनों का चबाना सा मालूम होता है--कहां तक वे बेचारे तारीखों का गट्ठर सा सिर पर लाद अपनी स्मरण शक्ति को पैनी करते रहें--किसी का पैदा होना, किसी का परलोक सिधारना, किसी का तख़्त पर बैठना, किसी का उस पर से उतरना, राज्य या पृथ्वी के लिये किसी का लड़ना, किसी से सुलह कर लेना इत्यादि झुण्ड की झुण्ड व्यर्थ की बातों को याद करते २ दिमाग उन का उसी गेंद के समान चक्कर खाया करता है जिसे वे क्रिकेट में नित्य खेला करते हैं--अन्त को ऊब कर उन्हें यही कहना पड़ता है कि इतिहास लिखनेवाले तो सिधार गये पर गट्ठर लादने को छोड़गये-सच भी है ऐसी ही कुछ प्रणाली चल पड़ी है कि इतिहास पढ़ाने वाले ऊपर कही बातों के सिवाय इतिहासों की अनेक लाभ दायक बातों का उन्हें लक्ष्य भी तो नहीं कराते-कदाचित् यही कारण है कि Hene हीन ने इतिहास को "A dusty herbarium of events and a nomenclature of things done" अर्थात् "घटनाओं और बहुत से वाकयात के नामों का एक रद्दी समूह" कहा है--परन्तु इति-

हास यदि ठीक २ लिखा जाय और पढ़ने पढ़ाने वाले उसे ठीक २ पढ़ें और पढ़ावें तो वेही ऐतिहासिक घटनायें रूखी और नीरस मालूम होने के बदले विचारवान् को पढ़ने के लिये अति रोचक और मन रमाने वाले विषय हो जांय--तब राम और युधिष्ठिर का धर्म राज्य; हरिश्चन्द्र की सत्य पर अटल निष्ठा; विक्रम और भोज का प्रजा वात्सल्य तथा औदार्य; पृथ्वी राज और जयचन्द्र की आपस की फूट; उदयपुर के महाराणा प्रताप सिंह की वीरता; पीछे मुसल्मानों का हिन्दुओं पर आक्रमण; मुगल बादशाहों में अकबर का सर्वसम्मत होना और औरंगज़ेब का हिन्दुओं पर अत्याचार और तअस्सुब और इस कारण मुसल्मानों का पतन; सिक्ख और मरहट्टों का ज़ोर पकड़ना; तत्पश्चात् ईष्ट इंडिया कम्पनी का धीरे २ यहां कदम जमाना; फिर सन् ५७ में सिपाहियों का बलवा करना; उपरान्त महारानी विक्टोरिया का हिन्दुस्तान के शासन का भार अपने ऊपर लेना; ये सब बातें किसी सुयोग्य विद्याभ्यासी के लिये व्यर्थ नहीं हैं-अन्त में इन सब बातों से एक बड़ी भारी शिक्षा निकलती है कि मनुष्य जाति प्रति दिन उन्नति के शिखर पर चढ़ रही है-हिन्दुस्तानही के इतिहास में ये बातें नहीं हैं बरन ग्रीस रोम ईजिप्ट कार्थेज कैलडिया आदि प्राचीन देशों का पुरावृत्त भी हमें यही बतला रहा है—एथेन्स और स्पार्टा की उन्नति फिर उन का अधःपात; उपरान्त मैसिडोनिया और फिर रोम का ज़ोर पकड़ना; फिर डेन्स और नारमन्स का यूरोप के देशों में घुसना—इन सब विविधि ऐतिहासिक घटनाओं से सिद्ध होता है कि ज्योंही एक जाति उन्नति के शिखर पर चढ़ कर नीचे गिरी त्योंही दूसरी जाति ऊपर चढ़ी—

इन सब बातों का खयाल कर कदाचित् कोई २ पढ़ने वालों के चित्त में यह आता होगा कि जब प्रत्येक देशों में सदैव ऐसीही घटना हुआ करती हैं; जब किसी का राज्य स्थिर नहीं रह सका तो क्या हम लोग समय खेलाड़ी के हाथ के गेंदही हैं कि उसने जिधर चाहा उधर को फेंक दिया और यदि ऐसाही है तो इतिहासों के पढ़ने से लाभ क्या? किन्तु ऐसा विचारना ठीक नहीं इतिहास के पढ़ने से बड़ा लाभ यह है

कि मनुष्य उन घटनाओं का पूर्वापर और तारतम्य देख बहुत सी बातों का अनुमान कर सकता है और तदनुसार अपनी भलाई के लिये यत्न कर सकता है—इतिहासों के पढ़ने से यह मालूम होता है कि यद्यपि कभी २ कोई जाति अत्यन्त उन्नति के उपरान्त नीचे गिर जाती है किन्तु समष्टि मनुष्य जाति की तरक्कीही कर रही है— प्रकृति के नियम के अनुसार जैसे संसार की सब बातों का अन्त है वैसेही राज्यों का और विजयी जातियों का भी अन्त है और अधःपात है--बढ़ते २ वृक्ष जब पुराना हो जाता है तब उसमें भी घुन लग जाता है तो यदि नेशन्स और राज वंशों में घुन लग जाय तो कौन अचरज--और यह हाल तो प्रायः इस जंगम जगत् मात्र का देखा जाता है—जैसा एक कवि ने कहा है--

"There is the moral of all human tales ;
'Tis but the same rehearsal of the past,
First Freedom and then glory, when that fails,
Wealth, Vice, Corruption, Barbarism at last,
And History with all her volumes vast,
Hath but *one* page".

सच है जहां महत्व गया कि नेशन का अधःपात हुआ--परन्तु यह महत्व क्यों जाय और कैसे जाता है इसी का विचार संक्षेप में नीचे किया जाता है--

किसी देश के अधःपात के जो कारण होते हैं वे दो कारणों में अलग किये जा सकते हैं--एक आभ्यन्तरिक दूसरा बाह्य--आभ्यन्तरिक कारणों में भी कोई ३ भौतिक कारण होते हैं जिन पर मनुष्य जाति का कोई बश नहीं है--दूसरा व्यवहारिक कारण होता है--यह मुलकी इन्तिज़ामों में चल विचल होने से पैदा हो जाता है और इन का होना अथवा न होना मनुष्यों के हाथ में रहता है—

भौतिक कारणों के कुछ उदाहरण ये हैं—कभी २ उस देश में जहां बहुत सी खान हों और खानों के चुक जाने या खाली हो जाने से जो द्रव्य खानों से निकलता था न निकले और यदि वही पदार्थ मानो उस देश

के अभ्युत्थान का हेतु था तब वहाँ दरिद्रता छाय जाने में क्या सन्देह रहा—न्यूकेसिल की कोयले की खान के चुक जाने पर न जानिये कितने अंगरेज़ों ने इङ्गलैंड के भविष्य पर क्या २ कुत्सित समालोचना किया है—हिन्दुस्तान में केवल दो वर्ष पानी न बरसे देखिये देश की क्या दशा हो जाती है—भूकंप के आने से भी कभी २ देश का देश तबाह हो जाता है इस का प्रसिद्ध उदाहरण इटली में पांपाई नगर है—इस के अतिरिक्त समुद्र और पहाड़ प्रकृति के बड़े उपादान कारणों में हैं यद्यपि इन दोनों में बहुधा थोड़ा अदल बदल होता है किन्तु कालान्तर पाय इतना अधिक उलट पलट हो सकता है कि वे विशेष लाभ जो उन प्राकृति पदार्थों के कारण किसी देश को होते हैं बिलकुल मिट जाते हैं—इङ्गलेंड और जापान का समुद्र सहायक न हो तो न जानिये इन दोनों देशों का क्या हाल हो—येही सब भौतिक कारण हैं और इन पर मनुष्य मात्र का कोई वश नहीं है—

व्यवहारिक या राज नैतिक कारण किसी देश के अधःपात का इस भांति होता है--प्रसिद्ध राजनीतिज्ञों का मत है कि परस्पर मनुष्य जाति की उन्नति आपस में Co-operation साथ काम करने से होती है—सच तो यों है कि राजनीति के नियमानुसार नेशन के मानेही मिलकर काम करने वाले मनुष्यों का समूह है—पुराने समय में यह मिलाने वाली शक्ति Common worship सब लोगों का एक धर्मावलम्बी होना था आज कल वही शक्ति Community of interest मिल कर स्वार्थ-साधन करना है--और किसी बात में मिल कर काम करने के लिये यह आवश्यक है कि लोगों में कुछ न कुछ समभाव और न्याय हो—इस कारण उस देश में जहां एक ओर अखण्ड धन और सब तरह के सामान हों दूसरी ओर जीवन पालन की आवश्यकीय वस्तु अन्न वस्त्र आदि भी मयस्सर न हो ; जहां कुछ लोगों के पास इतना धन हो कि ऐयाशी और भांत २ की फ़ुज़ूल खर्ची के बाद भी नहीं जानते कि उस धन को कैसे लगावें साथही कुछ लोग ऐसे हैं जिन को पेट भर भोजन तक नहीं मिलता शीत काल में कांपते हैं और तन

ढापने को वस्त्र नहीं मयस्सर होता ऐसे देश का निश्चयमेव अधःपात होता है–जिस देश में न्यायकर्ता भी बिगड़ जाते हैं पक्षपात दूषित हो खास लोगों के साथ दूसरों के मुकाबिले अन्याय करते हैं उस देश की अवनति जल्द होती है–रोम जो किसी समय इतना चढ़ा बढ़ा था कि अधिकांश यूरोप वहां के विजयी योद्धाओं के आधीन हो ज़रा से भ्रूविक्षेप में काँप उठता था वेही लोग जब अपने मातहत मुल्कों पर ज़ोर जुल्म करने लगे और आपस में फूट हो गई तब अवनति ने वहां भी आय टांग फैलाया–एथेन्स वालों का भी यही हाल हुआ जब तक इन दोनों देशों में आपस में मिल काम करने की शक्ति रही तब तक ये दोनों देश ग्रीस और रोम बड़े पराक्रमी रहे जैसेही लोगों की स्वतंन्त्रता छीन ली गई और प्रजा प्रभुत्व वहां का जाता रहा Monarchy एकाधिपत्य स्थापित हो गया वैसेही अधःपात आरम्भ हो गया यद्यपि सीज़र्स के समय तक रोम के जित देशों की संख्या बहुत बढ़गई थी तथापि अवनति का बीज वहां बो जा चुका था क्योंकि लोगों में स्वाधीनता जैसी Republic प्रजा प्रभुत्व राज्य में थी अब न रह गई–बड़े २ राज्यों में जहां मनुष्यों में राजनैतिक स्वतंत्रता न थी समय २ बड़े २ काम किये हैं परन्तु उन से जो शिक्षा मिली वह यह है कि कभी २ बड़े भारी अन्धड़ और तूफान में जब कि चारो ओर पूर्ण अन्धकार छा रहा है कुछ सूझ नहीं पड़ता एक बारगी बिजली की चमक से चारो ओर उजेला हो जाता है परन्तु जल्दीही पहिले से भी अधिक अंधियारा छा जाता है–

धर्म या मत का भी देश की उन्नति या अवनति में बड़ा भारी असर होता है–पुरानी कौमों में सबों को एकता के सूत्र में बांध रखने को धर्मही बड़ी अद्भुत शक्ति थी उसी के ज़ोर से बहुधा कितनी कौमें तरक्की की हालत में पहुंच गई हैं–शंकराचार्य ने इसी बुनियाद पर बौद्धों को यहाँ से निकलवाही दिया–एक वह समय था कि समस्त देश का देश बौद्ध हो गया अब वही बौद्ध मत नाम मात्र को रह

गया देश के एक छोर से अन्त तक में कहीं एक भी बौद्ध नहीं पाये जाते—यह मज़हबी जोश का अंजाम था कि कई सौ वर्ष की जमी-जमाई मुगलों की सलतनत औरंगज़ेब के हिन्दू मत को छेड़ने से उखड़ गई—यहां तक तो देश के अभ्युत्थान या पतन के आभ्यन्तरिक कारणों की समालोचना की गई अब कुछ वाह्य कारणों पर भी लिखना यहां पर उचित जान पड़ता है—इन बाहरी कारणों में सैनिक आडम्बर मुख्य जान पड़ता है—विदेशी शत्रुओं से देश की रक्षा के लिये सेना का बढ़ाना बड़ी ज़रूरी बात है—ज़ार निकोलस ने एक बार यह बहुतही अच्छा विचारा था कि धीरे २ सब देशों की सेना घटा दी जाय जिससे एक दिन ऐसा आवे कि पृथ्वी पर से लड़ाई का होना कतई बन्द हो जाय और व्यर्थ के लिये जीवों का प्राण नष्ट होना दूर हो जाय—पर ऐसा काहे को होना है प्रत्युत प्रत्येक देशों का सैनिक आडम्बर बढ़ताही जा रहा है—सेना की वृद्धि तो आवश्यकीय हुई है पर इस की बहुत ज़रूरत है कि हर एक आदमी देश के शस्त्र चलाने में तथा कवाइद करने में भरपूर निपुण हों जैसा जरमनी का यह एक नियम है कि मुल्क के हर एक आदमी लड़ने भिड़ने में चतुर हों कदाचित् सेना हार जाय लोग वहां के शस्त्र विद्या में निपुण रहेंगे तो शत्रुओं से अपने जान माल की रक्षा कर लेंगे—

अधःपात के वाह्य कारणों में एक यह भी है कि कितनी कौमों को मुल्क पर मुल्क जीतना और अपने राज्य में मिला लेने का खफ़-गान सा होता है—रोम का महा राज्य उसी समय से दुर्बल पड़ता गया जब से वहां वालों को और देशों के जीतने का पागलपन सवार हुआ—कारण उस देश के पतन का यही होता है कि उन जीते हुये देशों का ठीक २ प्रबन्ध नहीं हो सकता—जेताओं में लोभ अभिमान दूसरों पर अत्याचार की इच्छा प्रबल हो जाती है और लोग दिन २ अत्याचार और विषम भाव से असन्तुष्ट ही होते जाते हैं—इस समय के बड़े २ राज्यों में इन अभ्यन्तरिक तथा वाह्य कारणों में कौन २ से पाये जाते हैं इस का अनुमान करना अच्छे राज-

नीतिज्ञ का काम है पर इतना तो एक साधारण बुद्धि वाला भी देख सकता है कि सामयिक बड़े २ राज्यों में चरित्र की दुर्बलता ; धर्म सम्बन्ध में अश्रद्धा और ढिलाई; दूसरी कौम को जीत अपने आधीन रखने का खफगान; अवश्य उपस्थित है और इस सब का परिणाम क्या होगा कौन जान सकता है—A. S.

बहस करने के जुदे २ ढंग।

मैं इस बात पर कई बार विचार कर चुका हूं कि संसार में जुदा २ लोगों के जुदे २ ढंग बहस करने के होते हैं—पुराने समय में जब कि सभ्यता अपनी लम्बी टांग दुनिया के एक छोर से दूसरे तक न फैलाय सकी थी लोगों के बहस करने का ढंग बहुतही सरल और सीधा था वे बेचारे हर एक बात में नैयायिकों के अवचेद्कावच्छिन्न का झगड़ा नहीं लगाते थे—यदि उन में कोई बहस उठ पड़ी तो यातो दो चार आदमियों के समझाने से मांन गये या दो चार लात घूसों से तै कर लेते थे—पीछे कोई २ दार्शनिकों ने जैसे अक्षपाद और कणाद एक नया ढंग से बहस करने का निकाला--ये लोग बहुत से छोटे २ शस्त्रों से जिन्हें सूत्र कहते हैं अपने विपक्षियों पर आक्रमण करते थे उपरान्त इन्हीं के शिष्य प्रशिष्यों ने उन शस्त्रों में इतनी तरक्की की कि उस में अवच्छेद्कावच्छिन्न की सान धर अपने अपने विपक्षी को ऐसा फंसाते थे कि वह बेचारा उनके जाल से निकलनेही नहीं पाता था—यूरप में अरस्तू का भी यही ढंग था सूत्रों के जगह यह Syllogisms का प्रयोग करते थे—गुरू गुड़ही रह गये चेला चीनी हो गये--अक्षपाद और कणाद के शस्त्र तो केवल सूत्रही थे जिनके तात्पर्य विपक्षी कुछ समझ भी सकता था उन के शिष्य टीकाकारों ने तो ऐसा ढंग रचा कि उन के आघात से अपने को बचाना तो दूर रहो अवचेद् कावच्छिन्न के भूल भुलैया में पड़ व्याकुल हो जाता है--उपरान्त शंकर मध्व और रामानुज हुये जिन्होंने बूढ़े व्यास की चुटिया जिधर

को मोड़ा उधरही को मुड़ गई--ये विबाद में मानो खड्ग लिये सदा खड़े रहते थे विपक्षी को प्रश्नों की सेना से सब ओर से ऐसा घेर लेते थे कि प्रतिवादी बेचारे को घबड़ा कर हार मान चुप हो जाना पड़ता था--यूरोप में सुकरात का भी यही क्रम था--किन्तु जब बहुत लोग इस ढंग को समझ गये और काशी नदिया आदि प्रसिद्ध विद्यापीठों में देखा गया कि यह ढंग विबाद करने का केवल झगड़ा ही बढ़ाता है और कोई बात उससे सिद्ध नहीं होती तो उन्होंने एक नया क्रम निकाला जो कपिल कणाद तथा गौतम सबों के ढंग से भिन्न था–इस को "शठस्य शाठ्यम्" कहते हैं और शुद्ध हिन्दी में यही लट्ठ न्याय कहलाया–इस न्याय के अनुसार जब दो दल किसी बहस को कपिल कणाद तथा सुकरात या अरस्तू या अवचेदकावच्छिन्न के सहारे सिद्ध नही कर सकते थे तो लट्ठ ले २ अपने कथन को पुष्ट करते थे–एक हमारे मित्र जो अब तो बूढ़े हो गये हैं और अब पुढ़ाई में जब कुछ न सूझी तो बड़े भगवा वाले वैद्यराज हो यमराज के सहोदर बनने का हौसिला कर रहे हैं वे बहुधा मुह फुलाय बड़े घमण्ड से चर्चा करते हैं कि जब वे नदिया में न्याय का अध्ययन कर रहे थे तब न मालूम कै बार वेदान्तियों से विबाद करते२ लट्ठ लै उन को बेदान्तों का कर भगा दिया--

एक और दूसरा ढंग बहस करने का है जो इस ढंग से बहुत कुछ मिलता है और जिस का अनुकरण करने वाले प्रायः जुदे २ देशों में जुदी २ जाति और नेशन के लोग होते हैं--जब एक जाति वाले दूसरी जाति से ज़बानी बात चीत और बहस कर प्रतिवादी की पृथ्वी नहीं ले सकते तब दोनों परस्पर खड्ग लै एक दूसरे को समझा लेते हैं--फ्रांस के प्रसिद्ध सम्राट् लुइस Lewis the 14th को अपनी इस तरह की बहस पर इतना भरोसा था कि उन्होंने अपनी बड़ी तोपों पर Ratio ultima regum अर्थात् राजाओं की बहस ऐसा लिख रक्खा था--ऐसे दार्शनिकों के साथ शास्त्रार्थ करने के समय उस म-

नुष्य की कहावत जो रोमन् सम्राट् एड्रियन से एक समय बहस कर रहा था याद रखना चाहिये--जब उस के मित्रों ने उस से पूछा कि तुम बादशाह से बहस करते समय चुप क्यों हो गये? उसने जवाब दिया "मैं उस मनुष्य से शास्त्रार्थ में परास्त होने में कुछ लज्जा नहीं समझता जिस के पास ५० सेनायें हैं"--

इस के अतिरिक्त एक और क्रम बहस करने का है परन्तु इस का अनुकरण छोटेही लोग करते हैं--वह यह है कि ये लोग बात २ में "अल्ला कसम" "कुरान कसम" "गंगा कसम"; "जनेऊ कसम" "बाप कसम" इत्यादि कसमैं खाकर और मौक़े बेमैाक़े ख़ास कर सर्कारी अदालतों में हलफ़ अथवा गंगाजली या बाइबिल उठाने को मुस्तैद हो विपक्षी को परास्त करने का यत्न करते हैं--इन्हीं छोटे लोगों की बहस में अपनी बात पुष्ट करने का एक ढंग और होता है और वह यह है कि बात २ में "आओ कुछ शर्त लगा लो" "सौ रुपये बाज़ी" इत्यादि सूत्रों से वे अपने पक्ष का पोषण बहुत अच्छी तरह करते हैं--

शास्त्रार्थ करने के इन सब ढंगों से सब से बढ़ कर और ज़ोरावर एक ढंग है जिस का अनुकरण अधिकतर रोम के पोप और यहां के मुसल्मानी बादशाह करते थे--इस की कई एक शाखायें हैं--जैसे कोड़ा, शूली, बेंत, फांसी, कारागार, अन्धी कोठरी, पुलीस, हवालात, इत्यादि--बहस करने का पुराना ढंग जिस में मनुष्य केवल बातही की लड़ाई लड़ते थे मुसल्मानी राज्यों की अक़्ल फ़हमी में बहुतही नाशाइस्ता और कम असर पैदा करने वाले नज़र आये--आंख निकलवा लेना गला कटवा लेना या कठिन कारागार में बन्द कर देना विपक्षी को सहज में अपने बश करने के ये ढंग इन को बहुत पसन्द आये और इसी में नफ़ासत करते गये--

ऊपर जितने ढंग गिनाये गये हैं उन का अनुकरण इन दिनों कम हो गया है नई शाइस्तगी में इन सबों से प्रबल युक्ति शास्त्रार्थ करने की "मुद्रा न्याय" है--जो मनुष्य टकसाल के नये गढ़े सूत्रों को

काम में लाता है वह बहुतही जल्द अपने विपक्षी को परास्त कर अपना मतानुयायी बना लेता है--आज कल तो शास्त्रार्थ का इस से बढ़ कर कोई ढंग नहो है और विद्वन्मण्डली जैसे पार्लियामेंट के मेम्बर और म्यूनिसिपल कमिश्नर इत्यादि में इसका बहुतही प्रचार है और यह ठीक मालूम होता है क्योंकि रुपये से बढ़ कर बुद्धि ठीक करने वाली दूसरी वस्तु नहीं है--प्रत्यक्ष देखा गया है कि आप के कोई कितनाही विपक्ष हो चाहो पुलिस इन्सपेक्टर हो या शहर का कलेक्टर हाईकोर्ट का जज हो या अख़बार का एडिटर यह सबों का मुह बन्द करा देता है--

ये सब ढंग बहस करने के ऐसे हैं जिन का सहारा प्रायः पुरुष लोग लेते हैं महिला जनों के शास्त्रार्थ करने का तो ढंगही निराला है--चाण्डाल कंवख़्त डाढ़ी जार इत्यादि अनेक सूत्रों का प्रयोग और अपने वाक्यों की पदावली में पुनः २ उन की अनुवृत्ति इनको बहुतही सोहावनी मालूम होती है--यदि दैवात् आफत का मारा इन का विपक्षी कोई पुरुष हुआ तो वह इन के मधुरालाप से तुरन्तही मौन साध लेता है और जो कहीं बादी प्रतिबादी दोनों स्त्रियांही हुई तब तो इन दोनों के शब्दालंकार तथा रूपकालंकार की नई २ उक्ति युक्ति सुन अलङ्कार शास्त्र के कर्ता कविजन भी उन से शिक्षा ले लाभ उठा सकते हैं कहाँ तक कहैं कालिदास और भवभूति भी झकमार बैठे रहैं--

ये जो बहस के ढंग गिनाये गये केवल मनुष्य जाति के बीच प्रचलित हैं--पशुओं के शास्त्रार्थ का कूमही निराला है जिनमें मिस्टर डाग का व्याख्यान कानग्रेस और पार्लियामेंट के प्रधान २ वक्ताओं के व्याख्यान से बढ़ कर है जिसे फिर कभी पाठकों के सन्मुख धरैंगे--A. S.

भारत के दुर्दिन के कारण सदा न रहेंगे।

भारत की गिरी दशा के बारे में प्रत्येक मनुष्य अपनी समझ के अनुसार जुदे २ कारण बतलाते हैं—इस में सन्देह नहीं आया है सो जायगा ; जो मिले हैं सो बिछुरैंगे ; जो जीते हैं सो मरैंगे ; ऊंचे पर हैं सो नीचे को आवैंगे, नीचे को गिरे हैं सो एक दिन ऊपर को चढ़ैंगे इत्यादि—इस जंगम जगत् की गति रथ की धुरी के समान है जो बारी २ ऊपर को जा फिर नीचे आती है "नीचैर्गच्छत्युपरि च दशा चक्रनेमिक्रमेण", आधी रात को सूर्य देव का प्रचण्ड तेज कहां है ? दिन को मध्यान्ह समय अपनी ठंढी किरनों से जी हरा भरा करने वाली चन्द्रमा की शीतल चान्दनी कहां है ? इस असार संसार की भी ठीक ऐसीही दशा है—जो भारत किसी समय पृथ्वी भर का मुकुट मणि था ; जिस की आन शान जगत् विदित थी ; जो विद्या बीरता साहस और लक्ष्मी का एक मात्र विश्राम स्थान था ; वही अब सब भांत हीन दीन हो रहा है—जब से यहां के अभ्युदय के सूर्य अस्ताचल को पधारे तब से दुःख और दरिद्रता की निशा काल रात्रि सदृश बढ़तीही गई—भारत का वह समय जब कि पुण्यात्मा माननीय ऋषि मुनि विद्यमान् थे जिन का तपोबल, जिन की असाधारण बुद्धि, अद्भुत दैवी शक्ति, जगत् उजागर थी अब स्वप्नवत् हो गई—हम जो अपने को धन्य और सर्व श्रेष्ठ माने बैठे हैं सो इसी लिये कि हम उन्ही महात्मा ऋषियों के वंश परंपरा में हैं किन्तु खेद है कि इस बात को कभी नहीं सोचते कि उन में कौन सा ऐसा गुण था जिस से उन के नाम का ऐसा गौरव अब तक माना जाता है—हम उन के वंशज या गोत्रज होने का दम तो भरते हैं पर जिन गुणों के कारण उन मे ऐसी मनुष्य शक्ति वाह्य दैवी शक्ति थी अपने में उस के लाने की कभी एक पल भर के लिये भी चेष्टा नहीं करते और वे गुण ये थे—परस्पर की प्रीति ; सब के साथ सब की सहानुभूति ; एकता ! उदारता , सचाई ; बीरता ; अध्यवसाय या विचार

की दृढ़ता ; शान्ति ; दान्ति ; दया ; दियानतदारी ; इत्यादि-ये सब एकही घराने की बहू बेटियों सी उन ऋषियों के पवित्र आश्रम में बास करती थीं-महात्मा ईसा ने भी अपने चेलों से कहा है जो लोग ऊपर कहे सद्गुणों का सहारा ले संसार के सब काम करेंगे वेही नजात पावैंगे केवल हम पर विश्वास लाने से कुछ नहीं होता-यह उपदेश उन चेलों को रुचा और यथाशक्ति अपने गुरू के कहने के अनुसार काम करने लगे-परन्तु धर्म के मार्ग पर चलना तो एक टेढ़ी खीर है लोहे के चनों का चबाना है-अन्त को यह समझ किनारा कश होने लगे कि यह कहां का जगड्वाल है इस तरह फूक २ पांव रखने में तो बड़ी तकलीफ उठाना पड़ता है—हम ऊपर कह आये हैं ये सद्गुण एकही घराने की बहू बेटियों के से थे स्त्रियों का कुछ स्वभावही ऐसा होता है कि उन की राय एक दूसरे से नहीं मिलती किन्तु ये सब शील स्वभाव में बड़ी उदार और आपस में एक दूसरे को बहुत प्यार करती थीं-किन्तु आपस में सहमत न होने से सदा कलह करती थीं यहां तक कि उन सात्विक स्वभाव के ऋषियों को जिन के यहां इन अबलाओं का बास था इन से अपना पिण्ड छुड़ाना पड़ा-

दान शीलता और किफायत सारी सदा झगड़ती रहीं-उदारता कहे "कुछ दो" तब किफायत सारी (परमित व्यय शीलता) उसके विरुद्ध यही शिक्षा दे कि दान इत्यादि सर्वथा (अपव्यय) फुजूल खर्च है-योंही न्याय परायणता और उदारता कभी महमत नहीं होती थीं-पहली सदा उन ऋषियों को जोश दिलावे कि अपने औरस पुत्र के मुकाबिले में भी जो न्याय हो वही करते रहो-उदारता कहे नहीं रूखी न्याय परायणता किस काम की जब तक मनुष्य में दया के भाव से क्षमा कर देने का स्वभाव न रहे-और ऐसेही आत्म गौरव और नम्रता भी कभी शांत नहीं रहती थीं-जब नम्रता अपने भक्तों से कहे कि तुम सदा नम्र रहो तो आत्म गौरव चट बिगड़ उठे कि यह कायरी है और क्यों अपनी आंख नीची रहे-सगापन (भ्रातृत्व) और समानता (Equality) इसी पर प्राण दें कि ईश्वर की सृष्टि में जितने मनुष्य हैं सब समान भाई हैं और जो वस्तु रची गई हैं वह सबों की संपत्ति है-सारांश यह कि वे दोनों

का तोड़ इसी पर था कि "अयं निजः परो वेति गणना लघुचेतसाम् उदार चरितानान्तु वसुधैव कुटुम्बकम्" निदान उन सीधे स्वभाव के ऋषियों के लिये इन सब अबलाओं का प्रीति पूर्वक निबाहना मुशकिल हो गया और यह निश्चय ठहरा कि इस आफत से छुटने के लिये यही आवश्यक है कि कुछ उनमें से निकाल बाहर की जांय-अतएव बाज़ों ने न्याय को रक्खा तो उदारता को धता बुलाया; बहुतों ने साहस धारण किया तो बिचार को तिलांजुली दे दिया; एवम् किसी ने आत्मगौरव को अपनाया तो नम्रता आपही अपना सा मुह ले निकल भागी-जब उन सीधे सादे संयमी ऋषियों से इन अबलाओं का भार न संभल सका तो उन चेलों से भला अपने मालिक ईसा की इच्छा को पूरी करना कैसे हो सक्ता था-क्योंकि उनमें से बाज़ी तो ऐसी नखरे वाली और नाजुक दिमाग थीं कि बहुत सेवा करने पर भी नहीं प्रसन्न रहती थीं-और जब प्रभु ईसा ने यह सिखलाया कि इतना बरदाश्त करो कि अगर कोई एक गाल पर एक तमाचा मारे तो दूसरा गालभी फेर दो तो भला उनके मतावलम्बियों से यह असिधारा व्रत कैसे सध सक्ता था-वेसब कांपने से लगे और निश्चय किया खाओ पिओ आनन्द करो बाकी सब झगड़ा है-लेकिन इसपर भी उनका प्राण न बचा क्योंकि फिर इसपर ज़ोर दिया गया कि उदारता को ग्रहण करो और सबों के साथ प्रीति रक्खो-लेकिन ऐसा करने से तो अपने दुशमनों से भी प्रेम देखलाना पड़ता इसलिये किसी ने भी प्रीत को स्वीकार न किया और उसको लाचार हो देश छोड़ना पड़ा--निदान न्याय, दान, उदारता, प्रीति, सगापन, समानता आदि का अनादर प्रायः सबही जगह भया--एकता और हहानुभूति तो इंगलेण्ड मे जा ठहरी; समानता और स्वच्छन्दता अमेरिका को सिधारी; किफायत सारी ने स्काटलेण्ड का शरण लिया, अध्यवसाय की कदर फ्रांस में की गई, बीरता बुवरों के साथ बास करने लगी लौर दियानतदारी किसी कदर स्विटज़रलेंगड मे पहुंची-बाकी फिरभी मारी २ फिरीं पर कहीं भी ठेकाना न लगा-अरब के तरफ भागने से मुसलमानों ने मेहमान

दारी को अपनी बेगम बनाया-नम्रता और दया बौद्धों ने पकड़ रक्खा जब कि ये उनके देश में होकर भागी जाती थीं-लेकिन दान, उदारता, राजभक्ति और धर्म भीरुता फिर भी भागती ही फिरीं पर सब जगह जहां गईं दरवाज़ा बंदही पाया और अन्त समय भारतवर्ष में फिर लौटीं और उन का पूरी तरह से सत्कार किया गया—जिस समय इनकी और सब सहेलियां लौट आय सदा के लिये अपना बास भारत में निश्चय करलेंगी उस समय दुर्दिन दूर हो पूरी तरह सुदिन यहां आ-टिकैगा--M. C. भट्ट--

चिन्तय गोपालम्

पं० श्रीधर पाठक का स्फुट काव्य संस्कृत छन्दों में—ये दस बारह पंक्तियां पाठक महाशय की प्रतिभा का दूसरा नमूना संस्कृत पद्यरचना का है--

काव्य मंजूषा

पं० महावीर प्रसाद द्विवेदी की कविता का पूर्ण संग्रह—मंजूषा इसका बहुतही उपयुक्त नाम है इस मंजूषा को अपने पास रखने वाले का जी बहलाव बहुत अच्छा हो सक्ता है-काम करते २ जी ऊब गया हो सुस्ती और आलस्य ने आ घेर लिया हो द्विवेदी जी महाशय के मस्तिष्क की कारीगरी ले बैठ जाय मन मुदित होने में कोई कसर न रहेगी—

प्रेस के सहायार्थ दान

पं० हरनारायण बी, ए. शाहपुरा पट्टी-आरा ५)

पं० दीनदयालु दीक्षित अध्यापक गुरुसहायगंज-फर्रुखाबाद १)

पं० माधोप्रसाद कलकत्ता ५)

हम इन महाशयो के अतिकृतज्ञ हैं और ये हमारे बड़े रसिक पढ़ने वालों में हैं—यह तो हम कई बार सूचित कर चुके हैं कि हमारा उद्देश्य पत्र चलाने से निरा रुपया कमाने का नही है--यों तो रुपया संसार में ऐसी वस्तु है कि कौन उसे न चाहेगा भाग्य वानों की

उससे भेट होती है हम ऐसों का कहां इतना भाग्य-हम शुद्ध मन से कहते हैं कि हम इसमें इसी प्रयोजन से प्रवृत्त हैं कि अपनी मातृ भाषा की सेवा यावत् शक्य जो हो सके करते जांय साथही देश के उपकार की भी जो बातें सूझ पड़े उनको भी अपने पढ़ने वालों को चिताते रहैं-जिन्होंने हमारे इस निष्कपट शुद्ध भाव को पहिचाना और परखा वे हमारी सब भांत सहायता में सन्नद्ध हैं और हम उनके वाधित हो उन्हें अपनी शक्ति भर प्रसन्न रखने का प्रयत्न कर रहे हैं-तब इस अदला बदला होने में कौनसी बुराई है

"संपद्धिनिमयेनोभौ दधतुर्भुवनद्वयम्" ।
"परस्परंभावयन्तःश्रेयःपरमवाप्स्यथ" ॥

हमारी यह इच्छा नहीं है कि हजार दो हज़ार ग्राहक हों सच्ची कदर करने वाले थोड़ेही हमारे लिये बहुत हैं-अपना यह अनुभव अन्त में तौभी हम अवश्य कहेंगे कि पत्र का चिरस्थायित्व औरइसकी उन्नति भी तभी सम्भव है जब अपना निज का प्रेस हो देखैं कब तक हम इसमें कृतकार्य होते हैं--

सामयिक श्लोक ।

इदमेवहि पाण्डित्यमियमेव विदग्धता ।
अयमेव परो धर्मो यदायान्नाधिको व्ययः ॥

इदं त्रियामा शतयामधारिणी सुधाकरादग्निमुपैति साम्प्रतम् ।
तनोति तापं मृदु दक्षिणानिलो विधौ विरुद्धे हि विपत् पदे पदे ॥

ब्रह्मैव सर्वमिति वेदविदो वदन्ति तस्मान्नमे सखि पराऽपरभाव बुद्धिः । जारे ऽथवा निजपतौ सदृशो ऽनुरागो व्यर्थं किमर्थं मसतीति कदर्थयन्ति ॥ निन्दावमानावित्येतौ प्रीत्युद्वेग करौ नृणाम् । तावेव विपरीताख्यौ योगिनः सिद्धिदायकौ ॥

सुजनाः परोपकारं शूराः शस्त्रं धनं कृपणाः।
कुलवत्यो मन्दाक्षं प्राणात्यय एव मुञ्चन्ति॥
गृहासक्तस्य नो विद्या न दया मांसभक्षिणः।
द्रव्यलुब्धस्य नोसत्यं स्त्रैणस्य नपवित्रता॥
लता कुसुमभारेण शीलभारेण सुन्दरी।
कविता चार्थभारेण श्रयते कामपि श्रियम्।
ब्राह्मणाः श्रुतसंपन्ना ये त्रिवर्गमनुष्ठिताः॥
अलोलुपाः पुण्यशीलास्तान्नमस्यामि यादव।
नो मुक्त्यै स्पृहयामि नाथ विभवैः कार्यं न संसारिकैः॥
किन्त्वायोज्य करौ पुनः पुनरिदं त्वामीश मभ्यर्थये।
स्वप्ने जागरणे स्थितौ विचलने दुःखे सुखे मन्दिरे॥
कान्तारे निशि वासरे च सततं भक्तिर्ममास्तु त्वयि।
स्वस्ति स्वागत मर्घ्यहं वद विभो किं दीयतां मेदिनी।
कामात्रा मम विक्रमत्रयमिदं दत्तं गृहीतं मया॥
मादेहीत्युशनाह किं हरिरयं पात्रं किमस्मत्परम्।
इत्येवं बलिनार्चितो मखमुखे पायात्सवो वामनः॥

इति॥

हिन्दीप्रदीप

मासिक पत्र

विद्या, नाटक, इतिहास, साहित्य, दर्शन, राजसम्बन्धी इत्यादि
के विषय में हर महीने की पहिली को छपता है ॥

शुभ सरस देश सनेह पूरित प्रगट ह्वै आनन्द भरै
बचि दुसह दुरजन बायुसों मणिदीप सम थिर नहि टरै ॥
सूझै बिबेक बिचार उन्नति कुमति सब यामें जरै ।
हिन्दी प्रदीप प्रकाशि मूरखतादि भारत तम हरै ॥

जि०२५ सं०५।६।७।८ } प्रयाग { मई, जून, जूलाई, अगस्त सन १९०३ई०

पं० बालकृष्ण भट्ट सम्पादक और प्रकाशक की आज्ञानुसार
पं० रघुनाथ सहांय पाठक के प्रबन्ध से
यूनियन प्रेस इलाहाबाद में मुद्रित हुआ

सभायें पुस्तकालय और विद्यार्थियों तथा सर्वसाधारण से अग्रिम १॥≡)
समर्थों से मूल्य अग्रिम ३।=) ——०*०—— पीछे देने से ४।=)

पिछले अङ्कों की पूरी जिल्द फी जिल्द मै पोस्टेज १=)

——:००:——



हिन्दीप्रदीप

जि० २५ सं० ५-६-७-८ { प्रयाग { मई, जून, जूलाई, अगस्त सं० १९०३

कष्टात्कष्टतरंक्षुधा ।

शरीर में भांत २ के रोग दोष का होना ; धन रहित हो एक २ पैसे के लिये तरसना ; बन्धु वान्धव प्रेमी जनों की जुदाई का दुसह दुःख आदि अनेक कष्ट मनुष्य जीवन में आ पड़ते हैं किन्तु हाय पेट की आग का न बुझना इससे बढ़ कर कोई क्लेश नही है-और २ दुःख लोग बहुत कुछ रोने गाने और सन्ताप के उपरान्त किसी न किसी तरह बरदाश्त कर अन्त को चुप हो बैठ रहते हैं पर भूख का क्लेश नहीं बरदास्त होता-जाठराग्नि के लिये इन्धन संपादन का ऐसा भारी बन्धन है जिसमें जीव मात्र बँधे हुये भोर को खाट से उठतेही सांझ लों इसी की चिन्ता में

व्यग्र इतस्ततः धावमान् किसी न किसी तरह अपना पेट पालतेही तो हैं--अस्तु और २ समय दुरन्त पूरा इस उदर दरी का पाटना इतना कर्रा चाहो नभी रहा हो जैसा अब हो रहा है; किन्तु अनेक बार की इस गाई हुई गीत का फिर २ गाना व्यर्थ और नितान्त अरोचक होगा--योगी जन यत्न और अभ्यास से उन २ इन्द्रियों को जिन्हें काबू में लाना अतीव दुर्घट है अन्त को अपने आधीन करी तो लेते हैं पर इस जाठराग्नि के ऊपर उन का कुछ बश नही चलता वेवश उन्हें भी इसके लिये चिन्ता करनीही पड़ती है--शृङ्गारोत्तरसत्प्रमेयरचना चातुरी के एक मात्र परमचार्य कविवर गोबर्द्धन अपनी गोवर्द्धन सप्तशती में ऐसा लिख भी गये हैं--

"एकः स एव जीवति हृदय बिहीनोपि सहृदयो राहुः ।
यःसर्बलघिमकारणमुदरं न बिभर्ति दुष्पूरम्" ॥

जीवन एक राहु का सफल है जो केबल शिरोभाग होने से हृदय शून्य हो कर भी सहृदय चतुर या सरस हृदय वाला है इस लिये कि यावत् हलकाई का एक मात्र कारण उदर अपने में नहीं रखता--भागवत में व्यासदेव महाराज ने धनियों पर आक्षेप करते हुये लिखा है--"कस्माद्भजन्ति कवयो धनदुर्मदान्धान्" कवि और बुध जन धन के मद में अन्धे धनियों की सेवा क्यों करते हैं और अपना अपमान उन से क्यों कराते हैं ? अपने इस दग्धोदर के भर लेने को सागपात और बन के फल फूल क्या उच्छिन्न हो गये हैं--पर वह समय अब कहां रहा जब कि सन्तोष की शान्ति मूर्ति का प्रकाश एक २ आदमी पर झलक रहा था ; गांभीर्य और उदार भाव का सब ओर विस्तार था ; हवस और तृष्णा पिशाची का सर्वथा लोप था ; किसी को किसी तरह की संकीर्णता और किसी वस्तु का अभाव न था ; वैसे समय में भी क्षुधा का क्लेश इतना असह्य था कि लिखने वाले ने इसे "कष्टात्कष्टतर" कहा न कि अब इस समय जब कि कौड़ी और मुहर का फर्क आलगा है--उस समय लोग स्वभावही से सन्तुष्ट, सहनशील, सब भांत आसूदा, चंचल

मन और इन्द्रियों को अपने वश में किये हुये थे ; देश ऐसा रंजा पुंजा था कि चारो ओर आनन्द बधाई बज रही थी ; नई २ ईजादों से हवस इस कदर नहीं बढ़ी थी ; किसी को किसी चीज़ की हाजत न थी तब नई ईजाद क्यों की जाती-वही अब इस समय देखा जाता है कि लोगों में तृष्णा का क्षय किसी तरह होता ही नहीं सन्तोष को किसी कोने में भी कहीं स्थान नहीं मिलता ; "मन नहिं सिन्धु समाय" इस वाक्य की चरितार्थता इन्हीं दिनों देखी जाती है ; चंचल इन्द्रियों को दबा कर विषय बासना से परहेज़ करने वाले या तो दंभ की मूर्ति होंगे नहीं तो वेही होंगे जिन में शाइस्तगी या सभ्यता ने अपना प्रकाश नहीं किया ; परस्पर की स्पर्द्धा या डाह ने यहां तक पांव फैला रक्खा है कि लोगों को हवस की कटीली झाड़ी में झोंके देती है ; उदारभाव संकुचित हो न जानिये किस गुफा में जा छिपा दूसरे के मुकाबिले ज़रा भी अपनी हानि या अपनी हेठी सहना किसी को गंवारा नहीं होता ; दुर्भिक्ष पीड़ित प्रजा में अनेक आधि व्याधि प्लेग और मरी से सब ओर उदासी और नहूसत का पूरा रंग जम रहा है : चहूं ओर दरिद्रता का जहां साम्राज्य फैला हुआ है वहां विलाइत की नई २ नफासत और भांत २ की चटकीली मन को लुभाने वाली कारीगरी जो कुछ बच रहा उसे भी ढोये लिये जाती है-क्षुधा को कष्टात्कष्टतर लिखने वाले इस समय होते तो न जानिये कितना पछताते क्या तअज़ुब सिर धुनने लगते-किन्तु दैवी रचना बड़ीही अद्भुत है कुदरत के खेल का कौन पार पा सक्ता है इतने पर भी मोह का जाल ऐसा फैला हुआ है कि पढ़ अपढ़ ज्ञानी मानी सबी उसमें फसे हुये हैं ; क्षुधा के इस अपरिहार्य कष्ट से बचने की कौन कहे जान बूझ हम सब लोग उसमें अपने को छोड़ते जाते हैं-कितने हैं जिन्हें पेट भर अन्न खाने को नहीं मिलता सुख पूर्वक रहने को स्थान भी नहीं है तब ज़िन्दगी की और लज्ज़तें और आराम की कौन कहे पर नरक से परित्राण पाने को पुत्र का पैदा होना ज़रूरी बातमान रहे हैं "पुन्नाम्नोनरकात् त्रायते इति पुत्रः" क्या कुआं की भाग है हम नहीं जानते इन गीदड़ों की सृष्टि से क्या नरक से उद्धार होता है-नरक से उद्धार इस अदृष्टवाद को कौन जानता है

किसी की चिट्ठी तो आई नही पर इन गीदड़ों की सृष्टि यहां घोर नरक में हमें अलबत्ता गेरती है—जिस्में औलाद बढ़ै इस लिये पुत्र का अर्थ नरक से उद्धार करने वाला तब के लिये था जब देश का देश एक कोने से दूसरे तक सूना और खाली पड़ा था और उसे आबाद करना पुराने आर्यों को मंजूर था—अबतो मनु का यह श्लोक हमारे वास्ते उपयुक्त है—

"चतुर्णामपि पुत्राणामेकश्चेत्पुत्रवान्भवेत्।
तेन पुत्रेण सर्वे ते पुत्रिणो मनुरब्रवीत्"॥

चार भाइयों में एक के भी सिंह शावक सा पुत्र जन्मै तो उसी से वे चारो पुत्रवान् हैं; सच तो है मुर्दादिल, सब भांत गये बीते, निरे निकम्मे, गीदड़ कीसी प्रकृति वाले, अब इस समय हम लोगों की औलाद बढ़ के क्या होगी? सियार के कभी सिंह पैदा हो सर्वथा असम्भव है—इन का अधिक बढ़ना केवल ऊपर का वाक्य कष्टात्कष्टतरंक्षुधा को पुष्ट करने के लिये है—देश में क्षुधा का क्लेश जो दिन दिन बढ़ रहा है उस में सामयिक शासन प्रणाली की भांत २ की कड़ाई के अतिरिक्त एक यह भी है कि बाल्य विवाह आदि अनेक कुरीतियों के बदौलत हम लोगों की निकम्मी सृष्टि अत्यन्त बढ़ती जाती है जिन्में सिंह के छौनों का सा पुरुषार्थ कहीं छू नहीं गया—पूर्व सञ्चित सब शत छिद्र घट में पानी के समान निकला जाता है देश मे पुरुषार्थ के अभाव से नया धन आता नहीं; परिणाम जिसका भूख का क्लेश बढ़ाने के सिवाय और क्या हो सक्ता है-धन इस तरह क्षीण होता आता है धरती की शक्ति अल्प हो जाने से पैदा-वरी औसत से उतनी नहीं होती जितनी आवादी मुल्क की बढ़ रही है—एक साल किसी एक प्रान्त में भी अवर्षण हुआ तो उसका असर देश भर में छा जाता है—माना पहले की अपेक्षा धरती अब बहुत अधिक जोती बोई जाती है किन्तु उत्पादिका शक्ति कम होने से खेती की अधिकाई का कोई विशेष लाभ न रहा—अस्तु सो भी सही यहां की पैदावार यहीं रहती बाहर के दूर देशों में न जाती तब भी

सस्ती रहती अन्न का कष्ट न उठाना पड़ता-सो भी नहीं है देश में धन आने का कोई दूसरा द्वारा न रहा सिवाय पृथ्वी की उपज के वह उपज बाहर न जाय तो बड़े २ फर्म और महाजनों की कोठियों में भी जहां लाख और करोड़ की गिनतीहै एक पैसा न दिखलाई दे-कलकत्ता और बम्बई ऐसे दो एक शहरों को छोड़ देश भर में बड़े २ रोज़गारी जिनके घर रुपयों की झनझनाहट छाई रहती थी उदासी छाई हुई है जिनके चलते काम में किसी को पानी पीने की फुरसत नहीं मिलती थी वहां लोग मौन साधे बसना बिछाये हाथ पर हाथ धरे बैठे रहते हैं केवल ब्याज की या गांव की आमदनी से अमीरी ठाठ बांधे हुये हैं- तात्पर्य यह कि कोई दूसरा उद्यम न रहा सिवाय खेती की उपज के जो हमारी निज की भोग्य वस्तु है उसे दूसरे को दे जब हम उसका मूल्य लेंगे तो हमारे निज के भोजन में तो कसर पड़तीही रहेगी-इसका बिचार यहां पर छोड़ेही देते हैं कि वही उपज जिसे हम कच्चा बाना Raw materials कहेंगे हमसे खरीद बिलाइत वाले अपनी बुद्धि कौशल से बदले में हम से चौगुना कभी को अठगुना वसूल करते हैं और हम उन २ पदार्थों की चमक दमक तथा स्वच्छता पर रीझ खुशी से दिये देते हैं देश को निर्धन और दरिद्र कियेडालते हैं-जैसा हमारे यहां हज़ार पति और लाख पति रईसों में अग्र गण्य और माननीय होते हैं वैसाही अमेरिका जरमनी इंगलैंड आदि देशों में करोड़ पति हैं लाख दो लाख का धनी तो वहां किसी गिनती में नहीं हैं-उनलोगों ने अलबत्ता कभी कान से भी न सुना होगा कि भूख का कष्ट भी कोई कष्ट है-यहां पुत्र नरक से उद्धार का द्वाराही प्रजान समूहको इतना बेहद्द बढ़ा दिया कि पेट पालना भी दुर्घट होगया-हमारे पढ़नेवाले हमें चाहे जो समझें हमें चाहो जैसी हिकारत की नज़र से खयाल करें हम कहेंगे यही कि देश की इस वर्त-मान दशा में हमलोगों की सृष्टि का बढ़ना जीतेही नारकीय यातनाओं का स्वाद चखना है; हम नही जानते कहां तक इनका पौरूषेय विहीन प्रजान दल बढ़ता जायगा जिन्में गर्मी कहीं नामको नहीं बचरही सच माघ कवि ने कहा है ॥

"पादाहतं यदुत्थाय मुर्द्धानमधिरोहति ।
स्वस्था एवाप मानेपि देहिनस्तद्वरं रजः"

रास्ते की धूलि भी पांव से ताड़ित हो सिर पर चढ़ती है जिससे प्रगट है कि अपना अपमान ऐसा बुरा है कि ऐसी तुच्छ वस्तु धूलि भी नहीं उसे सह सकी और सिर पर चढ़ अपमान का बदला चुकाना चाहती है–कवि कहता है धूलि "खाक" को भी जब इतना ज्ञान है तो उस मनुष्य से धूलिही भली जो अपमान सहकर भी निर्विकार जैसे का तैसा बना रहता है–इतनाही होता तो इनकी यह दशा क्यों होती कि इस समय भूमण्डल पर कोई जाति नही है जो इतने दिनों तक अपमान कैसा वरन गुलामी की हालत में धौल खाते २ जन्म का जन्म बीत गया और चेत न आई सिर नीचा किये सबर को अपना दीक्षा गुरू मान सब सहते चलेजाते हैं–जिन्हे गुलामी झेलते न जानिये कितनी शताब्दी बीत गई जो इनकी नस २ में व्याप्त होगई इसी से सेवकाई का काम ये बहुत अच्छा जानते हैं और अपनी स्वामि भक्ति के बड़े अभिमानी भी हैं–मालिक बनना न इन्हे आता है न स्वामित्व की जितनी बात और जितने गुण हैं वे इनके मन में धंसते हैं न आक्रमान्त इनके सुधर ने की कोई आशा पाई जाती है–केवल दास्य भाव होता तो कदाचित् मिट जाता और फिर से इनमें नव जीवन आजाता–पुराने ब्रिटन्स चार सौ बर्ष लों रोमन्स लोगों की गुलामी के बाद फिर जो क्रम २ से स्वच्छन्द होने लगे तो कहां तक उन्नति के शिखर पर चढ़े कि अब इस भूमण्डल पर उनके समान कोई जाति नही है और इंगलैंड इस समय सब का शिरोमणि होरहा है–पर यहाँ तो दूसरा कोढ़ इनके साथ परिवर्तन विमुखता का लग रहा है मनु के समय जो दो पहिये का छकड़ा निकला उसमें फिर अबतक कुछ अदल बदल न हुई--शायद इसके बराबर का ऐसाही कोई दूसरा पाप होगा कि बाप दादा के समय की प्रचलित रिवाज में परिवर्तन किया जाय–जो कुछ दोष उसमें आगया है उसे मिटाय संशोधन करना मानों अपने लिये नरक का रास्ता साफ करना है उसका यह लोक परलोक दोनों गया दाखिल समझो इत्यादि बातों का

खयाल कर सुधाको कष्ठात्कष्टतर कहना हिन्दुस्तान के लिये सब भांति सत्य और उचित मालूम होता है-

पंचका एक प्रपंच

बहुत दिनों से हमारे पढ़ने वालों को पञ्चु महाराज की कुछ सुध न मिलने से समझ गये होंगे कि पञ्चुजी प्लेग के बड़े जलसे में शरीक हो कब्र का सहारा ले पीर मर्दों की कौन्सिल के सेक्रटरी में अपना नाम उन्होने दर्ज करालिया होगा-पर यह उनकी खाम खयाली थी यहां तो जैसी रूह वैसे फरिश्ते जैसा यह प्रदीप बुझते २ जगमगा उठता है वैसाही पञ्चु जी भी कुम्भकरण की गहरी नींद में सोते २ एक दो करवट कभी २ लेही लेते हैं-अस्तु यहतो आप जानतेही हैं कि हमारे पञ्चुजी हर फन मौला हैं शायदही कोई ऐसा गुण होगा जो इनकी पैनी बुद्धि की कैद से भाग निकला हो इसीसे अहंभाव ने भी अपना पूरा अधिकार इनपर जमा रक्खा है और एक मिनिट के लिये इनको अपने पञ्जे के बाहर नही करना चाहता किन्तु अधिकतर अहंभाव इनमें अपनी कुलीनता का है यह इसी कुलीनताही का आभास है कि आपका कनौजियों में बड़ामान और प्रतिष्ठा है जिससे इन्होने नजानिये कितनी कुवांरियों का कुंवरपन छुड़ाय सोहागिन का खिताब उनके बीच बंटवा दिया यहां लौंकि बूढ़े होने पर भी ये गोपियों में कान्ह बने बैठे हैं-इनकी चरण रज कितनोंही के भालपट्ट को पवित्र करती है करार में बिना एक हज़ार की भेंट के जिस रजका दर्शन भी दुर्लभ है--ऐसी २ कितनी इनकी बड़ी २ अद्भुत बातेहैं "सर्वेहि महतां महत्" जो सब बातें आजलों गधे की सींग की भांत न जानिये किस कोने में छिपी पड़ीं थीं किन्तु आज इनका सब ठौर मान होते देख मुझसे न रहा गया निदान इस समय उफान की तरह मुख से निकल पड़ी आशा है पाठक जन इनकी चरितावली को करण रसायन समझ सुनने में अवधान पूर्वक दत्त चित्त होंगे--और २ बातें छोड़ हम इनकी कुलीनताही का केवल परिचय देंगे जिसकी टटोल मुझको इनकी बात चीत से मिली--एक दिन इनको ठाट

वाट के साथ जाते देख इनका परिचय पाने को नीचे लीखी बात जो इनसे मेरी हुई सो लिखे देता हूं जिससे पाठक जन भी इनसे परिचित हो जांयगे--

माथे पर तिलक पाँव में बूट चपकन और पायजामा के एवज़ कोट और पेंट पहने हुये पञ्चजी को आते देख मैं बड़े भ्रम में आया कि इन्हे मैं क्या समझूं पण्डित या बाबू या लाला या क्या ? मैने विचारा इस समय हिकमत अमली बिना काम में लाये कुछ निश्चय न होगा बोला-पालागन प्रणाम बन्दगी सलाम गुडमार्निंग पंच महाराज--

पञ्च-न-न-नमस्कार नमस्कार-पु-पु-पुरस्कार-परिस्कार-

मैंने कहा मैं एक बात पूछा चाहता हूं बताइयेगा--

पं०--हांहां-पू-पू-पूछोना-ब-ब-बताऊंगा क्योंनहीं-

आप अपने नाम का परिचय मुझे दीजिये जिससे मैं आप को जान सकूं कि आप कौन हैं-

पं०-प-प-परिचय क्या ह-ह-हमतो कु-कुलीन हैंन--

मै अचरज में आय कहने लगा ऐं कु कुलीन कैसा ?

पं०-हां अ-अ-और क्या--

तो क्या व्याकरण के अनुसार कुकुत्सितः कुलीनः कुकुलीनः अर्थात् कुलीनों में सब से उतार--अथवा कुत्सितः प्रकारेण कुपृथिव्यांलीनः-क्या इस मनुष्य जीवन में आप को सब लोग अतिनिन्दित समझते हैं ?

पं०--अजीं तुमतो बड़ी हिन्दी की चिन्दी निकालते हो--हम कुलीन हैं एक कु को बतौर व्याज के समझो-

मैने फिर कहा--अजी व्याज कैसा बड़े २ सेठों के समान क्या कुलीनता में भी कुछ व्याज देना होता है--मेरे मन में कुछ ऐसा आता

है कि यह कुलीन कुलियों की जमा है-तो यहां आपका क्या काम है जाकर कुलियों मे शामिल हो बोझा ढोओ-

पं०-नहीं २ तुमतो बड़े कठ हुज्जती मालूम होते हो अरे कुलीन के अर्थ हैं, अच्छे वंश में उत्पन्न-अबतो समझ में आया-

मैं फिर बोला-तो क्या अच्छे वंशमें पैदा होनेही से कुलीन हो गये कि कुलीनताकी और भी कोई बात आपमें सद्वृत्त अथवा विद्या इत्यादि भी हैं-

पं०-हम तो नहीं हमारे पूर्व पुरुषों में कोई एक शायद ऐसे होगये हों विद्या वद्या तो हम कुछ जानते नहीं न सद्वृत्त जानें क्या है-हां पुरुखों के समय से जो विर्त भूर दक्षिणा बंध गया आज तक बराबर पुजाते हैं और अब अङ्गरेज़ी फेशन भी सब इखतियार करते जाते हैं-और फिर अब इस संसार में कौन ऐसा होगा जो मिलावटी पैदाइश का नहो वैसाही मुझे भी समझ लो-पैदाइश की आप क्या कहते हो पैदाइश कमल की देखिये कैसे मैले और गंदले कीचड़ से उसकी उत्पत्ति है तो जब हम कुलीन हैं तो हमे अपने कुल का अभिमान क्यों नहो-

मैं-पंच महाराज यह तो वैसीही है कि बाप ने घी खाया हाथ हमारा सूंघलो खाली पैदाइश से कुछ नहीं होता "आचारः कुलमाख्याति" कुछ आचार विचार भी जानते हो-

पं-हैम आचार विचार इसी की छिलावट में पड़े हुये लोग अपनी ज़िन्दगी खोये देते हैं तरक्की २ चिल्लाया करते हैं और तरक्की ख़ाक नहीं होती-इसी से तो इन सब बातों को हम फिजूल समझ आज़ाद बन गये और इस समय के जैंटिलमैनों में अपना नाम दर्ज़ करालिया-सच पूछो तो शराब और कबाब यही दोनों सामयिक सभ्यता और कुलीनता का खास जुज़ है-हां इतनी होशयारी ज़हर रहै कि प्रगट में बड़ा दंभ रचे रहै ऐसा कि कदाचित् कभी कोई देख भी ले तो रोब में आ किसी को मुह खोलने की हिम्मत न रहे-

मैं-हां यह ठीक कहते हो पर कुछ गुण की पूंजी भी तो होनी चाहिये-

पं०-None sense दुनियां में कौन ऐसे होंगे जो अपने पुरखों के कुलीनता का दम न भरते हों और गुण तो वे सीखें जिनको कहीं दूसरा ठिकाना न हो यदि गुण सीखकर पेट चला तो कुलीनता फिर कहां रही-

मैं अधिक अपने माननीय मित्र की पोल खोलना मुनासिब न समझा इससे उनसे दो चार इधर उधर की बात कर रफूचक्कर हुआ और यहां आय जो कुछ हमारी उनकी बात चीत हुई हिन्दीप्रदीप में छपवा दिया जिस्से पढ़नेवालोंको हमारे मित्र का महत्व मालूम होजाय और उनके ऊपरी आडम्बर और दंभ में आय भूल में न पड़ें-बुरों के ऊपरी कपटके आचरण से उन्हे भला न मान बैठें और भलों के ऊपर से तीखे औरचोखे पर मन से स्वच्छ और निष्कपट वर्ताव से उन्हे बुरा न कहने लगें-सच है-

"केचिन्मृगमुखाव्याघ्राः केचिद्व्याघ्रमुखाः मृगाः।
तत्स्वरूपविपर्यासात् विश्वासो ह्यापदां पदम्" ॥

पंच महाराज का चेला-म-दे-प्र-भट्ट

सुन्दरी

एक छोटासा मनोहर उपन्यास।

ग्वालियर निवासी बाबू सूर्यकुमार वर्मा लिखित ॥

१

"तुझे योग्य सुन्दरसा दूल्हा मिले मेरी यही इच्छा है। मैं तेरा व्याह हो जाने पर दुःख से छूटूं-ईश्वर क्या कभी ऐसा होगा-बेटी, तेरे व्याह के सिवाय अब मुझे और कुछ चिन्ता नहीं है-"

"मां आज तुमने फिर वही बातें निकालीं; मैं तुमको अकेली छोड़ कर कहां जाऊंगी ? ब्याही जाने पर जब मैं ससुरे चली जाऊंगी तब तुम मेरे बिना अकेली कैसे रहोगी ?"

"बच्ची" तुम ठीक कहती हो; मां बाप का माया मोह सबको ऐसाही होता है। परन्तु यह कितने दिन चलेगा? धीरज धरके लोक लाज के अनुसार काज करनाही होगा। तू अब तेरहवीं में है इसी सावन से चौदहवीं लगेगी। तेरे साथ की लड़कियाँ ब्याही होकर ससुरे में अपना घर बार चलाती हैं। अब मुझे क्या तेरे ब्याह के सिवाय और कुछ अच्छा लगता है? जैसे हो तैसे, इस साल तेरा ब्याह ज़रूर होना चाहिये। ऐसा किये बिना हमारा छुटकारा नहीं॥"

"अगर मैं इस साल अपना ब्याह न करूं; तो तुम क्या करो ?— मां यदि तुम सचमुच मेरा प्यार करती हो, तो अभी से ब्याह करके मुझे नरक में मत डालो। परमात्मा ने जो समय हमारे ब्याह का नियत किया होगा उस समय पर बिना हुए नहीं रहेगा, तुम बिना-कारण क्यों दुःखी होती हो, और मुझे भी दुःखी करती हो।

"यदि मैंने इस साल तेरा ब्याह न किया तो बिरादरी के लोग क्या कहेंगे ?

"विरादरी के लोग जांय भाड़ में। क्या तुम मुए विरादरी के लोगों के डर से मेरा नाश करना चाहती हो ? मैं तेरह चौदह बर्ष की हुई, यह देख कर क्या वेलोग नहीं हसते हैं ? तुम उनके हंसने पर इतना क्यों डरती हो ? मुझे तो उनके हंसने से कुछ डर नहीं लगता। लड़कपन के ब्याह की बुरी चालने भारत बासियों को बड़ी हानि पहुंचाई। ऐसा अखबार वाले, देश हितैषी, सामाजिकलोग पुकार २ कर कहरहे हैं। हमारे यहां समाज संशोधन करने वाले लोग बातें तो बड़ी लम्बी चौड़ी हांकते हैं पर अपने आप कुछ करते धरते खाक नहीं"—

"बेटी, जो तू कहती है वह सब सच है, परन्तु हमारे यहां आज-तक कोई लड़की इतने दिनों तक क्वारी नहीं रहने पाई। यदि हम ऐसा

करें तो क्या लाभ होगा ? बिरादरी वाले बुरा भला कहेंगे और इससे फल सिद्ध क्या है"–

"भली बात में यदि लोग बुरा भी कहें तो कुछ हानि नहीं है। अभी ब्याह न करने का पाप पुण्य सब मेरे सिर पर है। मां, इसका पाप तुम्हे न होगा। काशी सरीखी पवित्र नगरी में तुम रहती हो। यहां के लोग विद्वान् और पण्डित हैं। समाज संशोधन विषय में बाहर के लोग यहां के पण्डितों सेही राय लेते हैं यहां के एक विद्वान् प्रधान पण्डित ही जब युवती विवाह के पक्ष पाती है, तब तुम इतना क्यों डरती हो ? अपढ़ लोगों के यहां गुड़िया गुड्डा सरीखा क्यों तुम मेरा ब्याह करना चाहती हो ? मेरी इच्छा अभी अधिक पढ़ने की है। वह कैसे पूरी होगी ? हमारे साथ पाठशाला में यूरोपियन, पारसिन, बङ्गालिन, गुजरातिन, मराठिन लोगों की लड़कियां पढ़ती हैं। उन सब के माता पिता लिखे पढ़े सभ्य हैं। वेलोग अपनी लड़कियों का व्याह कम उमर में क्यों नहीं करते उनलोगों को कोई क्यों नहीं हंसता इस साल मेरा व्याह होगा, जब हमारे साथ की लड़कियां सुनेगीं, तब वे हसेंगी और हंस हंस हमारे साथ ठट्ठा करेंगी; जिसके कारण हमें लजाना पड़ेगा। बड़े होने पर व्याह करने से उनकी गृहस्थिति कैसी अच्छी है। मैं अभी तेरह चौदह बरस कीही हूं क्या इतने परही तुम्हे बड़ी जचती हूं" ?

"बेटी, तुम चौदह छोड़ चौबीस बर्ष की हो तौ भी हमारे लिये बड़ी नहीं हो। हमें तू सदा छोटीही दिखलाई पड़ेगी, परन्तु एक बार किसी तरह तो हाथ पीले कर पाऊं,,–

"अच्छा, तुम मेरा व्याह करनाही चाहती हो ? तो लो मैंभी तुम्हें अपने मन की एक बात बतलाती हूं। मुझे रहने के लिये एक अच्छासा घर चाहिये दो घोड़े की बग्घी हवा खाने के लिये चाहिये अच्छे २ कपड़े, गहने चाहिये। मेरे मन को प्रसन्न करनेवाला कोई धनी, सुन्दर, होशियार तरुण और विद्वान् पति देखकर ढूंढ दे।–मैं ब्याह करने को तय्यार हूं। कहो मां, ठीक है न +"

श्यामा ने अपनी एक मात्र लाड़ली लड़की के मुख से ऐसा विचार सुनकर उसकी पीठ पर हाथ फेरा और प्यार से गद्गद् होकर उसका मुख चूमा; और उसे आशिर्वाद दिया कि, बच्ची की मनोकामना भगवान् पूरी करे। उसे अनुकूल पति मिले। यह मेरा उसे आशिर्वाद है,।

सुन्दरी ने यह सब बातें बैठे बिठलाये हंसी में कही थी परन्तु भोली मां ने 'तथास्तु' कह कर आशिर्वाद दिया। सीधे सांचे मनुष्यों के हृदय से निकली हुई बात बहुधा सच होती है। यही बात यहां हुई, जिसका हाल मैं नीचे देता हूं।

२

मणिकर्णिका घाट से थोड़े ही दूर पर चल कर एक मकान में यह वार्ता हुई थी। तारीख १४ मास जून, इतवार का दिन संध्या का समय था। मकान कुछ बहुत बड़ा नथा, परन्तु साधारण रीत पर अच्छा बना था। मकान के पीछे सुन्दर छोटा सा बगीचा था। सुन्दरी छुट्टी के दिन अपना समय बगीचा के सुधारने में लगाती थी। उस बगीचा में तरह तरह के फल फूल लगे थे। सुन्दर स्वच्छ क्यारियां बनी थीं। क्यारियों के किनारे बेला चमेली और गुलाब के फूल लगे थे। जिनके पुष्पों की सुगंधि बगीचा कोही नहीं वरन सारे घर को सुगंधित कर रही थी।

श्यामा के पिता पंजाब प्रांत में एक एकस्ट्राअसिस्टेंट कमिश्नर थे। उनके दो सन्तान हुई; एक पुत्र रामगोपाल और दूसरी कन्या श्यामा— श्यामा ने अपनी माता का सुख ८ वर्ष तकही देख पाया। तीन चार वर्ष के बाद श्यामा के पिता का भी देहान्त होगया।

रामगोपाल की उमर इस समय अनुमान २० वर्ष के होगी। वह क्वीन्स कालिज बनारस के बी, ए, क्लास में पढ़ते थे अकस्मात् उनकी पत्नी का देहान्त हो गया। मां बाप की मृत्यु से उनका दिल संसार से पहिलेही हट गया था। अब पत्नी के मरने से वे और भी विरक्त हो गए। उन्हों ने कालिज में पढ़ना छोड़ दिया। अपने पिता की छोटीसी जागीर को बेंच बाच कर बहिन का बिबाह एक मित्र के साथ कर दिया; और अपने एक मित्र के साथ व्यापार के लिये चीन

को चलते हुये। जाते समय पांच हज़ार नक़द अपनी बहन को और दस हज़ार अपने साथ ले गये। बहन और कई मित्रों ने उन्हे जाने से रोका परन्तु उसने किसी का कहा न माना। रामगोपाल पहिले पहिल तो बहन के पास चिट्ठी पत्री भेजते रहे, परन्तु तीन चार वर्ष के उपरान्त पत्र व्यवहार भी बन्द करदिया। श्यामा ने बहुत कुछ चिट्ठियां डाली परन्तु कुछ भी पता न चला। श्यामा के पति बनवारी ने भी अपने साहब के मार्फत बहुत कुछ तलाश करवाया परन्तु सब निष्फल हुआ। अन्त में श्यामा रो धो कर बैठरही। बड़े खोज करने पर भी जब पता न लगा तब बेचारी सिवाय रोने के और क्या करे ? यह बात श्यामा ने अपनी लड़की सुन्दरी को कभी नहीं बतलाई।

बनवारी और श्यामा सरीखा सुखी कोई बिरलाही होगा-दोनों आपस में बड़े प्रेम भाव से रहते थे। इन दोनों के दो तन और एक मन था। वे परस्पर इतना प्रेम रखते थे कि उन्हे स्वतः यह शंका थी कि हमारे सरीखा दाम्पत्य जगत में और भी किसी में है ? यथार्थ में ऐसा दाम्पत्य बड़ी भाग्यवानी थी दोनोंही पवित्र आचरणवाले, सुशिक्षित और संतोषी थे। इनके सारे गुणों परही मोहित हो कर परमात्मा ने इनको एक सर्व गुण सम्पन्न कन्या रत्न दिया था। इन्होने इसका नाम सुन्दरी रक्खा। माता, पिता दोनों उसको प्राण तुल्य समझते थे। राज पुत्र का भी इतना लाड़ प्यार न होता होगा जितना इसका होता था। सच पूंछो तो वह लड़की सुन्दरी प्यार करने योग्य थी। देव कन्या तुल्य उसका गौर वर्ण, मृग के नयन के तुल्य उसके नेत्र, भौंरा सरीखे काले बाल, मोती सरीखे दांतों की सफेद लड़ी, गुलाबी कपोल, बिम्बाफल-वत् ओंठ और इसपर विशेष सौन्दर्य लानेवाला उसका मधुर भाषण, नम्र-शान्त स्वभाव, पवित्राचरण और प्रशंसनीय विद्याभिलाष था। लड़कपन को त्याग कर युवा अवस्था को प्राप्त होती हुई सुन्दर मूर्ति किसका चित्ताकर्षण न करती होगी ? सुन्दरी काशी के एक विद्यालय में अङ्गरेज़ी और संस्कृत की शिक्षा पाती थी। इसके पिता आर्यसमाज के सभासद थे। उनके साथ सभा समाजों में सुन्दरी को जाने का बहुधा

अवसर मिलता था। अच्छे २ समाचार पत्र, मासिक पुस्तक, पिता के द्वारा सुन्दरी को पढ़ने के लिये मिलती थी। इस कारण उसके विचार अन्य समवयस्क बालिकाओं की अपेक्षा बहुत अच्छे थे।

३

एक दिन अकस्मात् रात के नौ बजे पानी बरसना आरम्भ हुआ। आकाश में बादलों की घन घोर घटा छागई। बिजली चमकने लगी, छत के पनाले और सड़कों पर नालियां बहने लगीं। सड़कों पर कीचड़ छा गया ऐसा कि चलने वालों के जूतों में कीचड़ चिपट कर सिर तक पहुंचती थी। पानी मुसला धार बरस रहा था। इधर उधर पानी बरसने के सिवाय कुछ भी आवाज़ सुनाई नहीं पड़ती थी। ऐसी भयानक रात और मुसलाधार पानी में बाहर निकलने की किसे हिम्मत थी?

पानी रिमिक झिमिक बरस रहा है, दस या साढ़ेदस बजे का समय है, इस समय एक तरुण स्त्री बिना छाता लगाये सड़क के ऊपर स्टेशन की ओर सड़क की लालटेनों के उजेले में भागी चली जाती है। इतनी रात गये और ऐसे बरसते पानी में चलने पर भी उसके मुख पर बिलकुल भय के चिन्ह दिखलाई नहीं पड़ते थे वरन उसके मुख पर इतना अवश्य मालूम होता था कि इसके ऊपर कोई बड़ा संकट आ पड़ा है। वह अपने मनही मन कुछ बरबराती हुई कम्पित स्वर से सड़क पर सीधी चली जाती थी। जब कभी कहीं पर लालटेनों का उजेला कम दिखाई पड़ता वहां बिजली की चमक से वह अपना रास्ता देख लेती। वह स्वयं नहीं जानती कि मैं कहां जाती हूं! केवल सहायता पाने की आशाही उसे खींचे लिये जाती थी। परन्तु इतनी रात गए ऐसे भयंकर समय में उसको किसकी सहायता मिलती जब वह स्टेशन के समीप पहुंची तो उसे दूरसे एक तरुण पुरुष दिखाई पड़ा पैर में देसी जूता, देह पर एक सादा कोट पायजामा पहिने सर पर साधारण टोपी हाथ में छाता और पानी बरसने के कारण बरसाती ओढ़े हुये था। सवा ग्यारह बजे की गाड़ी जाने के लिये वह जल्दी जल्दी स्टेशन की ओर जा रहा था। इस पुरुष को दूर से देख कर उस स्त्री को कुछ हिम्मत आई और जल्दी से उसके पास जाकर

बड़े बिनीत भाव से पूछा महाशय क्या यहां कोई डाक्टर या वैद्य मिलेगा ? यदि यहीं कहीं पास किसी वैद्य या डाक्टर का मकान हो तो कृपा करके मुझे बतला दीजिये । मैं सदैव आपकी ऋणी रहूंगी मेरे चाचा--यह कह कर स्त्री अपने आंचल से आंसू पोंछने लगी । इस स्त्री की विलक्षण आकृति देख कर स्टेशन की ओर जाने वाला युवा ठहर गया इतने में फिर बिजली चमकी । बिजली के प्रकाश में वैद्य का घर पूछने वाली तरुणी का मुख युवा पुरुष को दिखाई पड़ा । उसका मुख देखतेही तरुण उसपर मुग्ध हो गया, थोड़ी देर तक तो उसके मुख से एक भी शब्द नहीं निकला परन्तु बड़े सोच विचार के उपरान्त उसने कहा 'मैं एक डाकृर हूं' कहिये आपका क्या काम है ? मैं आप की सेवा टहल के लिये हाज़िर हूं । "

पाठक गण इस स्त्री को आप ने पहिचाना ? यह स्त्री वही हमारी चरित्र नायका सुन्दरी है ।

"इस समय जो आपसे भेंट हुई इसको ईश्वरीय कृपा समझना चाहिये । डाक्टर साहब चलिये, जल्दी चलिये कृपा करके जल्दी चलिये । मेरे चाचा बहुत बीमार हैं उन को आज क्षण क्षण पर बेहोशी आती है-चलिए डाकृर साहब शीघ्रता कीजिये ; मेरे चाचा अच्छे-मेरे चाचा अच्छे हों"-इतना कहते ही सुन्दरी के आंखों में आंसू भर आये और चिल्ला कर रोने लगी ।

"घबड़ाओ मत" डाकृर ने हिम्मत बंधा कर कहा "धीरज धरो, तुम्हारे चाचा को अच्छा करने के लिये मैं अपना जाना बन्द करता हूं । परन्तु तुम इस समय पानी में भींग रही हो, लो मेरा छाता लगा लो" ।

सुन्दरी ने अपना सिर नीचा कर डाक्टर साहब को धन्यवाद दिया और कहा "नहीं साहब, मुझे छाता नहीं चाहिये, मेरे चाचा मुझे घर पर चल कर अच्छे मिलें बस-"

"तुम इतनी निराश मत हो । इस पानी में अधिक मत भीजो हमारा कहो । घर जाकर कहीं पीछे तुम्हें भी भींगने से ज्वर